चरित्र पराग

ब्रह्मलीन परमसंत
(डा0 श्रीकृष्ण लाल जी महाराज)

डा0 वीरेन्द्र कुमार सक्सेना

श्रद्धा का प्रथम प्रसून परम आदरणीय बाबू जी

(डा0 श्याम लाल जी)

के

चरणाम्बुजों में

सादर समर्पित

अनुक्रमांक अंक

1. पूज्यनीय श्री रामचन्द्र जी महाराज–
   पूज्य लालाजी महाराज, फतेहगढ़ी

2. पूज्यनीय श्री रघुवर दयाल जी–
   पूज्य चाचा जी महाराज, कानपुरी

3. पूज्य डा0 श्रीकृष्ण लाल जी–
   पूज्य ताऊजी महाराज, सिकन्द्राबाद

4. पूज्य डा0 श्यामलाल जी सक्सेना–
   पूज्य बाबूजी गाजियाबाद

महापुरुषों के नामों के समक्ष उनके प्रचलित श्रद्धेय नाम या सम्बन्धित नाम दिए गये हैं जिन नामों से उनका सम्बोधन पुस्तक में हुआ है।

प्राक्कथन

सेवत सुलभ सकल सुखदायक।

प्रनतपाल सचराचर नायक।।

जौ अनाथ हित हम पर नेह।

तौ प्रसन्न होइ यह वर देहू।।

इस अनुपम चरित्र को लिखने की प्रेरणा, उन्हीं सत्पुरुष या वंश के महापुरुषों द्वारा दी हुई है। पूज्यनीय ताऊ जी मुझसे बहुत और विशेष प्रेम करते थे। मुझे भी उनसे एक ऐसी मोहब्बत थी और है, जो बेगरजाना थी और है, परन्तु मैं अहं ही कह सकता हूँ या अहं का इतना जोर हुआ कि मैं अपने ही ख्यालात से घिर कर 1–2 वर्ष तक ही नहीं पूरे आठ वर्ष तक अलग ही रहा। उन पूज्य ताऊ जी से जो मेरे प्रत्येक कार्य के प्रेरक थे और मेरे सब कुछ थे, उनसे कुछ कारणोंवश जिनको मैं अपना अहं ही कहूँगा, बिछुड़ा रहा परन्तु इस विछोह में भी वे मेरे दिल, दिमाग पर सदैव छाये रहे। मैं अपने ख्यालों से एवं अपने व्यक्तिव से उन्हें कभी अलग न कर सका। उनकी याद में कभी–कभी घण्टों रात में मुँह छिपाये रोता रहता इसके बावजूद मेरे अहं ने मुझे उनके पास न जाने दिया। वे प्रेमी भी बराबर मुझे याद करते जैसा कि मुझे अपनी सास तथा अन्य लोगों से पता चलता पर मैं रूठा हुआ, रोता हुआ अपने अहं को पकड़े बैठा रहा। परन्तु एक रात जब मैं जिला अस्पताल में था उस समय मैं सर्जन इन्चार्ज था क्योंकि सर्जरी में कोई अन्य डाक्टर नहीं थे। मुझे काम बहुत रहता और सुबह का गया हुआ शाम को छः बजे तक ही लौट पाता। जाड़े के दिन थे, सुबह पूजा को भी अधिक समय न मिल पाता था, इस कारण रात में जब कभी भी नींद खुलती तो कुछ देर पूजा के लिए बैठ जाता था। करीब 2 या ढाई बजे रात का समय होगा ऐसा अनुभव हुआ कि मेरे ड्राइंग रूम के दरवाजे पर (जिसमें मैं पूजा करता था) किसी ने दस्तक दी। मैंने दरवाजा खोला पर वहाँ पर कोई न था। तत्पश्चात् फिर ऐसा लगा कि कोई दस्तक दे रहा है पुनः मैं उठ कर देखना ही चाहता था पर सोचा दूसरी बार किवाड़ खटकने का इन्तजार कर लूँ। इतने में मुझे नींद आ गयी तो क्या देखता हूँ कि पूज्य ताऊ जी दरवाजे पर खड़े हैं। अचानक उन्हें देखकर मै। घबड़ा सा जाता हूँ और कहता हूँ, अरे! आप! वो कहते हैं "बेटे! मैं बड़ी देर से तुम्हे बुला रहा हूँ, मोहब्बत ने

इतना जोर मारा कि तुम्हे ं देखने चला आया। क्या तुम अपने ताऊजी को भूल गये?'' मैं उनके चरणों को छूता हूँ और वे बड़े स्नेह से मुझे बहुत देर गले लगाये रोते रहते हैं। आँखे खुल गयीं, तबियत बड़ी बेजार थी और बराबर दिन भर उनका ख्याल आ–आ कर टकराता रहा। मन की अशान्ति के कारण मैं पूजा में बैठ गया। उस वख्त एक क्षण भर को यह ख्याल आया कि क्या यह पोस्टिंग हुई कि पूजा करने को भी समय नहीं मिलता, और अपने ऊपर बड़ी ग्लानि हुई। मेरे आश्चर्य की भी सीमा न रही कि दूसरे या तीसरे दिन जब मैं अस्पताल जाकर बैठा ही था तो वहाँ जिला जेल के डाक्टर ने जो कि उस समय लखनऊ डाइरेक्ट्रेट से आ रहे थे बताया कि मेरा स्थानान्तरण जिला जेल बिजनौर हो गया जो कि बाद में गोंडा ही हो गया। वहाँ पर न जाने के लिए मैंने बहुत प्रयास किया परन्तु स्थानान्तरण न रुका, और वहाँ पहुँच कर मैंने अनुभव किया कि मुझे पर्याप्त समय पूजा के लिए मिल गया। परन्तु पूज्य ताऊ जी का ख्याल बराबर परेशान करता रहा एवं उनको हर वख्त साथ ही देखता। जब न रहा गया तो उनको खत लिखा और उसका जवाब आपने अपने ही कर कमलों से दिया कि तुम्हें देखना चाहता हूँ। यदि विशेष परेशानी न हो तो जल्द ही आ जाओ। पत्र पाकर मैं बेचैन हो उठा, मैंने छुट्टी ली और गाजियाबाद पहुँचा। वहाँ से मैं अपने बड़े भाई (सेठ भाई साहब), भाभी जी, अपनी पत्नी एवं बड़ी बहिन के साथ उनके दर्शन हेतु गया। आप चारपाई पर बाहर बरामदे वाले कमरे में बैठे थे। हम लोगों ने पैर छुये। उस समय प्रेम का ऐसा अनुपम दृश्य उपस्थित हुआ कि कुछ क्षण न वे बोले और न मैं ही बोल सका। तत्पश्चात उन्होंने मुझे अपनी खाट पर बिठा लिया। 8 वर्ष का बाँध टूट गया। मेरे वहाँ से आने के एक महीने बाद जब मेरे ससुर सास (श्री दयानन्दबाबू एवं उनकी पत्नी) वहाँ उनके दर्शन के लिए गये थे, उस समय मेरा छोटा भाई वृजेन्द्र कुमार भी वही था फिर उनसे आपने कहा कि नन्हें को भेज दीजिएगा। मेरा यह काम आप अवश्य कर दीजिएगा। मुझे खबर मिली और मैं अगस्त में फिर एक सप्ताह की छुट्टी लेकर उनके श्री चरणों में रहा और वही प्रेम, वही सदा! कुछ नहीं। कहीं भी अहं की धुन्ध का नाम नहीं! वे सत्पुरुष कुछ ही दिनों बाद निर्वाण को प्राप्त हो गये, परन्तु सदा उसी तरह मुझे अपने कृपाधार से सराबोर करते रहे हैं। भविष्य में उनकी इस कृपाधार का इच्छुक मैं यही चाहता हूँ कि वे ही मेरे प्रेरक रहें।

सन् 1973 में ही मुझे तारीख याद नहीं परन्तु परम पूज्य लालाजी महाराज के जन्म शताब्दी के उत्सव के पहले मैंने स्वप्न देखा कि, मैं कहीं गया हूँ, जहाँ एक लम्बा चौड़ा मैदान है और पास ही कोई नदी बह रही है,

वहाँ पहुँच कर देखता हूँ कि एक छोटे से खटोले पर कोई बुजुर्ग बैठे हैं। और पास ही एक तरफ ईंटों की चुनाई हो रही है। इधर उधर ईंटें आदि बिखरे पड़े हैं। मैं उनसे दरियाफ्त करता हूँ कि यह क्या बन रहा है। इस पर वे कुछ नाराज होते हैं और मुझे बताते हैं कि यह श्रीकृष्ण की समाधि बन रही है जो काम उनकी औलाद को करनी चाहिए वह बाप को करना पड़ रहा है। मैं उन बुजुर्ग को अच्छी तरह पहचान नहीं पाता हूँ पर उनके जवाब में मैने अर्ज किया कि मैं नहीं जानता पर मैंने सुना है कि वे अपनी समाधि के लिए नहीं कह गये थे वे नाराजगी के साथ ही कुछ लाल जलाल से बोले अफसोस! क्या कोई बाप यह कह कर जाता है कि तुम मेरा दाह संस्कार और श्राद्ध करना। वंश के महापुरुष किसी बुजुर्ग की बेइज्जती उनकी औलाद से नहीं देख सकते। इस पर मैंने अर्ज किया कि आप माफ करें, मैं उन महापुरुष की समाधि की व्यवस्था अवश्य करूँगा! इससे वे प्रसन्न होते हैं और एक पर्चा देते हैं जो शायद पीला था और कहा कि तुम अमुक जगह चले जाओ! मैं वहाँ से उस बताये हुए स्थान पर जाता हूँ जहाँ एक घुमावदार गोल सीढ़ी से ऊपर पहुँच जाता हूँ वहाँ एक बुजुर्ग बैठे हुए हैं उनके पास एक लाल बही खाते का एक गट्ठर रखा हुआ है। मैंने उनसे कुछ कहा जो कि मुझे अब याद नहीं है, वह उस बहीखाते में कुछ देखते हैं और मुझे एक गोल लिपटा हुआ पीले रंग का कागज देते हैं, जिस पर कुछ लिखा है वह भी अब मुझे याद नहीं है। वे बुजुर्ग उसे देते समय यह कहते हैं कि बहुत दिन से तुम्हारा यह कागज रक्खा है, अच्छा हुआ तुम आ गये। इसको लेते जाओ। जब उन बुजुर्ग से वह कागज लेकर सलाम करके चलने को होता हूँ उसी समय कोई आदमी एक गट्ठर किताबों की लाता है वह पुस्तक भी पीली जिल्द की है और कहता है ''लो यह डाक्टर श्री कृष्ण लाल जी की जीवनी भी लेते जाओ।'' पुस्तक के ऊपर देखता हूँ कि मुझ दीन का ही नाम लिखा हुआ है। तभी से मुझे इसकी प्रेरणा सी मिली और यह ख्याल मुझे बेचैन सा किये रहता है कि मुझे पूज्य ताऊ जी की जीवनी समाज में पहुँचानी है। उसी की प्रेरणा स्वरूप मैंने उन महापुरुष समर्थ सद्गुरु की जीवनी लिखने का प्रयास किया है। पाठकों से नम्र निवेदन है कि वे मुझ दीन की भाषा आदि की त्रुटियों का ध्यान न करें और उन पूज्यतम पूज्य सद्गुरु के जीवन को पढ़कर लाभ उठायें तथा उनके प्रेम के पात्र बनें।

विनीत–

डा0 वीरेन्द्र कुमार सक्सेना

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक को आपके समक्ष उपस्थित करने के पूर्व मैं अपने पूज्यतम पूज्य बाबूजी डा0 श्यामलाल जी सक्सेना के चरणों मे प्रणाम करता हूँ, जिन्होंने मुझे इसके लिए प्रोत्साहित किया और अमूल्य समय एवं सुझाव देकर तथा पथ प्रदर्शन करके इस पुस्तक को पूर्णता दी है। उनके दया का मैं हृदयतम से आभारी हूँ। इसके अतिरिक्त मैं पूज्य सरदार जी डा0 करतार सिंह धींगरा का भी आभारी हूँ जिन्होंने पुस्तक के लिए सहर्ष प्रोत्साहन दिया है। मैं (हरी भाई साहब) डा0 हरी कृष्ण भटनागर एवं डा0 ब्रजेन्द्र कुमार सक्सेना का बहुत आभारी हूँ, जो बराबर अपने पत्रों द्वारा मुझे इसके लिए प्रोत्साहन देते रहे, जिसके फलस्वरूप मुझे उत्साह एवं बल की प्राप्ति होती रही। मैं पूज्यनीया शर्मा बहिन जी का हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने पूज्य ताऊ जी के बारे में बहुत कुछ बताया है जिससे मुझे काफी सहायता मिली है।

मैं अपने भाई साहब डा0 राजेन्द्र कुमार सक्सेना का भी आभारी हूँ जिनसे मुझे प्रत्येक कार्य के करने का स्नेहसिक्त समर्थन प्राप्त होता रहा है। अन्त में मैं अपनी पूज्य सास धर्म पत्नी बाबू दयानन्द जी का हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने सदैव ही बिछोह काल में भी मेरे हृदय के वियोगजनित जख्म को सदैव उनकी चर्चा से कुरेदा और जिसके फलस्वरूप मैं उनकी याद की तड़प से घायल हो एक पल भी चैन से न रह सका। मैं श्री ओ0पी0 सिंह तथा श्री आर0सी0 वर्मा जी का हृदय से धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने मुझे सहयोग दिया है। मैं पाठकवर्ग एवं समस्त सत्संग परिवार का हृदय से आभारी हूँ जो इस पुस्तक को प्रेमपूर्ण हृदय से पढ़ेंगे और महात्मा डा0 श्रीकृष्ण लाल जी महाराज पूजय ताऊ जी के कृपाधार से आध्यात्मिक लाभ उठायेंगे। मैं समस्त पाठकवर्ग से यही प्रार्थना करता हूँ कि वे इस पुस्तक को सदैव आदर की दृष्टि से देखें तथा सादर ही उसका मनन एवं पाठन करें।

गुरुदेव तुम्हारी जय होवे।

विनीत–
डा० वीरेन्द्र कुमार सक्सेना

पूज्य ताऊ जी महाराज

फना खुद मुझमें हो रहकर, पलट दे जिन्दगी मेरी
तेरे पैगाम से जाहिर हो, शाने बन्दगी मेरी।।

पूज्य लाला जी महाराज
उर्फ
श्री रामचन्द्र जी महाराज

जन्म 4 फरवरी 1973, बसंत   निर्वाण 14 अगस्त 1931

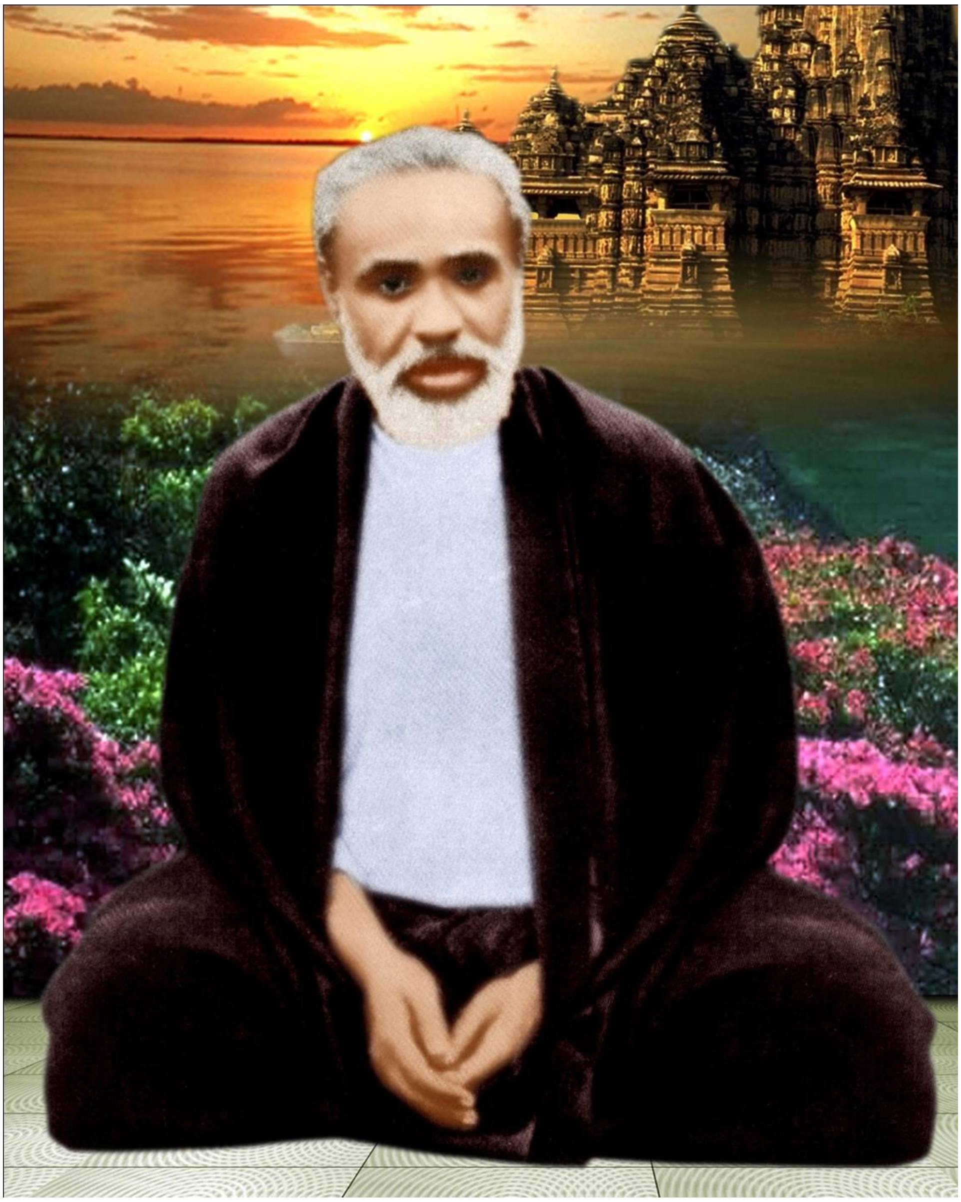

निकले जब ये दम साकी, और निजा ने आकर धेरा हो।
तो मुझ बेकस के सर पर, ये मेरे रहबर हाथ तेरा हो।।

महात्मा रघुवर दयाल जी
उर्फ
पूज्य चाचा जी महाराज

जन्म 07 अक्टूबर 1875 निर्वाण 07 जून 1947

खुदी को कर बुलन्द इतना कि, हर तकदीर से पहले।
खुदा खुद बन्दे से पूछे, बता तेरी रजा क्या है।।

चरित्र-पराग
पूज्य ताऊ जी महाराज

हे प्रभु जी, सर्वत्र निवास करने वाले! सबके अन्दर बसने वाले, सारे सुकर्मों की प्रेरणा देने वाले गुरुदेव! तुम्ही हमारे पिता हो। तुम्ही हमारी ममतामयी माँ भी हो। तुझे हम स्मरण करते हैं! तेरा ध्यान करते रहें। तेरा विचार करते रहें एवं तुम्हारे द्वारा दिखाये हुए मार्ग पर अग्रसर होते रहें। परन्तु हे! सर्वशक्तिमान! इसकी शक्ति भी तुम्ही तो दोगे, तुम्ही तो प्रेरक हो एवं तुम्हीं स्त्रोत हो! हे प्रभो यह प्रेरणा जो तुमने मेरे हृदय में उत्पन्न की है कि मैं तेरी लीलाओं को कलमबद्ध करूँ। तेरे उस चरित्र को जो अगम, असीम, अनन्त, अनादि, अलेखनीय एवं अवर्णनीय है। जिसकी एक–एक घटना, एक–एक क्षण सभी अलौकिक है। मैं सीमित अपूर्ण, उस असीमित एवं पूर्ण चरित्र को अपनी लेखनी द्वारा प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहा हूँ। वैसे तो ऐसा प्रतीत होता है कि मैं सूर्य को दीपक दिखा रहा हूँ परन्तु हे प्रभो! आपका यह सेवक अपने महिमामयी आराध्य के गुणगान टूटी–फूटी भाषा में लिखना चाहता है। उसे स्वीकार करना या न करना यह तुम्हीं पर निर्भर है। हे प्रेरक! प्रेरणा दी है तो मुझे शक्ति भी दो कि मैं तेरा भक्त न कहला सकूँ तो सेवक बनकर तुझसें ही अनुरक्त रहूँ। मैं इस असार संवार में जो भी कर्म मन बचन से करूँ वह सब तेरी ही प्रेरणा से प्रेरित होकर करूँ। मैं तुझसे भिन्न होकर कुछ भी न कर सकूँ। हे दयापुंज करुणानिधान मुझे वह दिव्य ज्ञानचक्षु प्रदान कीजिए जिसके बल पर मैं विश्व भर में जड़ चेतन सब में सर्वत्र व्याप्त आपका ही रूप देख सकूँ और आपके अद्‌भुत जीवन की कुछ घटनाओं को आपकी दया से कलमबद्ध कर सकूँ। हे नाथ! यह दास जैसा भी है, तुम्हारी है जो अपने सीमित बुद्धि से आपके गुणगान करने का प्रयास कर रहा है। बाकी तेरी इच्छा सर्वोपरि है।

लाखों में इम्तिखाब के काबिल बना दिया।
जिस पर भी नजर डाली उसे पार कर दिया।।

❋ ❋ ❋

तेरे जख्मों का हमसे ये प्यारे पिता,
जाता खींच के नक्शा दिखाया नहीं।
देखी हर जगह जो निराली झलक,
जाता भेद किसी से बताया नहीं।।

जिस प्रकार यह संसार तीन गुणों से युक्त है और यह मानव शरीर भी तीन गुणों से ही चालित है। सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण ये तीनों ही इस संसार में व्याप्त रहते हैं। संसार में आज जो ईर्ष्या, डाह, मारकाट, खून, लूट, युद्ध व्याप्त है जिसमें मनुष्य विवश सा रक्त की नदियाँ बहाता है। न चाहते हुए भी संसार में यह सब प्रत्यक्ष प्रचन्ड रूप में दिखाई दे रहा है, इसका एक मात्र कारण उस समोगुण की प्रधानता है जो मनुश्य को मानवता से हटाकर पशुता की तरफ अग्रसर करता है जिससे उसके अन्दर व्याप्त सतोगुण दब जाता है। रजोगुण की प्रधानता से यह संसार भौतिक उन्नति करता है। विज्ञान की यह अलौकिक उन्नति, आविष्कार, चाँद सितारों की पहुँच, यह रजोगुण की देन है। इसने मनुष्य को भौतिक सुख सुविधा आदि आराम अवश्य दिए हैं परन्तु तमाम आराम होते हुए भी यह विज्ञान शान्ति नहीं दे सका। इसने मनुष्य को कितना अशान्त बना दिया है। मनुष्य सब कुछ प्राप्त करके भी दुःखी हैं। उस शान्ति को प्राप्त करने के लिए मनुष्य मंदिर, मस्जिद, गिरजे जाता है। आज कितने लोग उसमें भी शान्ति न पाकर झूँठे नशे को धारण कर बैठे हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसी शक्तियाँ भी प्रभु दया से हैं जो सतोगुण से परिपूर्ण हो अशान्त हृदय की ज्वाला को बुझाकर उन्हें अमर शान्ति के पथ पर अग्रसर करती हैं। यदि ऐसा न होता तो शायद यह संसार न रह पाता। प्रभु अपनी दया से अपने प्रिय को भेजते हैं जो इस अशान्ति लोक में शान्ति प्रदान करते हैं। इस संसार में भगवत कृपा से सदैव ऐसी महान आत्मायें आया करती हैं जो इस नश्वर शरीर को धारण करके इस संसार के सारे व्यवहार करते हुए उस परमपिता का सत्य संदेश मानव मात्र को पहुँचाते हैं।

मर्यादा पुरुषोत्तम राम, भगवान श्री कृष्ण जी, श्री रामकृष्ण परमहंस, श्री राधा स्वामी, श्री विवेकानन्द, महामना महात्मा रामचन्द्र श्री महाराज एवं श्री रघुवर दयाल जी महाराज आदि ऐसी ही महान आत्मायें हैं, जो इस संसार में अपने लिए नहीं वरन परहित के लिए एवं प्रभु के सत्य सनातन संदेश के लिए ही आईं और न जाने कितनों को उस अमर शान्ति का रास्ता दिखाकर पुनः अपने प्रियतम की गोद में जा सोयीं। यह एक परम सौभाग्य की बात है कि भारतवर्ष इसमें बहुत ही आगे हैं। गीता में किए हुए वचन कि–

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत,
अभ्युत्थानंधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।

को पूरा करते ही हैं। ऐसी महान आत्मायें अपने को छुपाकर रखती हैं जिससे उनका उद्देश्य पूरा हो और जब कोई अधिकारी या प्रेमी दिखायी देता है तो वह अपनी शक्ति से उसे खींच लेते हैं और यदि उसने अपने आपको, चाहे

वह जैसा भी हो, उनके श्री चरणों में अर्पित कर देता है तो फिर अधिकारी अनाधिकारी की बाँध को भी तोड़ देते हैं। प्रेम के लिए कोई भी नियम नहीं, कोई बन्धन नहीं है। प्रेम स्वच्छन्द, स्वतंत्र है। उसका कोई माप नहीं।

''प्रबल प्रेम के पाले पड़कर प्रभु को नियम बदलते देखा।''

ऐसे न जाने कितने ही उदाहरण हैं। प्रभु को पाने का रास्ता प्रेम और भक्ति का ही है।प्रेम के वशीभूत होकर समर्थ गुरु साधक को एक पल में ही कहां से कहाँ पहुँचा देते हैं। जिन्दगी को ही पलट देते हैं।

राहे सलूक इश्क में रियाजत नहीं जरूर।
सौ–सौ मुकाम होते हैं तय एक नजर में।।

जिस प्रकार धन्य है वह देश, वह धरती जहाँ ऐसी महान आत्माओं ने जम्न लिया, ठीक उसी प्रकार धन्य हैं वो लोग जिन्हें उनके श्री चरणों में बैठने का अवसर लिया और धन्य हैं वो जो उनके प्रेम पात्र हुए। वह जाति, वह वंश, वह नगर, वे माता–पिता ये सभी धन्य हैं क्योंकि उनको ईश्वर प्रेम स्वयं और बड़ी सुलभता से प्राप्त हो जाता है। क्योंकि गुरुजन ईश्वर को प्रिय हैं। अपने प्रिय का प्रिय तो ईश्वर को भी प्रिय है। जैसे पिता को पुत्र से अधिक स्नेह पौत्र से होता है क्योंकि वह उसके प्रिय पुत्र का पुत्र या अंश है। मनुष्य मात्र को उसके परम लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए जो आत्मायें दयाल देश से अवतरित होकर इस पृथ्वी के लोगों को प्रभु की ओर उन्मुख करती हैं, उन्हीं को सन्त, सद्गुरु, औलिया, पीर आदि नाम से पुकारा जाता है।

यह एक सर्वविदित सत्य है कि भारत में ही ऐसी आत्मायें विशेष रूप से अवतरित हुई हैं। उसमें भी उत्तर प्रदेश को विशेष महानता प्राप्त हुई है। 18वीं शदी में जबकि समाज में धर्म के नाम पर केवल आडम्बर ही रह गया था, चारों ओर अधर्म फैल गया था। मनुष्य जिसको एक अवलम्ब चाहिए, वह अवलम्ब विहीन होकर पूर्ण रूप से अशान्त हो चुका था। तभी ईश्वर ने प्रत्येक क्षेत्र में एक साथ ही कई महान आत्माओं को भेजा, जिन्होंने संसार में आकर धर्म एवं शान्ति की नींच डाली। महर्षि दयानन्द श्री सालिगराम साहब श्री विवेकानन्द जी, श्री रामकृष्ण परमहंस आदि। इन्हीं समयों में उत्तर प्रदेश के मैनपुरी जिले में दो आत्यंत महान आत्माओं ने कायस्थ वंश में जन्म लिया। जिनका उद्देश्य ही भूले भटकों को रास्ता दिखाना था। जिला मैनपुरी के उच्च कायस्थ वंश जिनको चौधरी की पदवी प्रदान की गयी थी, उसी वंश में श्री हरबख्श राय नाम के एक धन्य पिता के घर दो दिव्य आत्मायें अवतरित हुईं। जो श्री रामचन्द्र जी महाराज उर्फ लालाजी महाराज एवं श्री रघुवर दयाल जी महाराज उर्फ श्री चच्चा जी महाराज के नाम से विख्यात हुईं। जिनके मिशन को अभी भी देश के कोने–कोने में उनके प्रेमीजन फैला

रहे हैं। पूज्य लाला जी महाराज (फतेहगढ़ निवासी) एवं श्री चाचा जी महाराज का जीवन एक ऐसा आदर्श जीवन था एवं उनमें इतना प्रेम भरा था जो एक बार आ जाता वह ही उस रस में डूब जाता। वे कहा करते थे कि–

कदगन है यही, गैर कोई आने न पाये
गर बेखबर आजाये तो फिर जाने न पाये।

पूज्य लालाजी महाराज के पिता एक रईस आदमी थे और उनका खान–पान सब रईसों की भाँति ही था। परन्तु उनकी धर्मपत्नी बहुत ही सुशील, भगवद् प्रेमी एवं बड़ी ही धार्मिक प्रवृत्ति की थीं। वह प्रायः संसार से उदासीन ही थीं। उनका अत्यधिक समय पूजा पाठ में ही व्यतीत होता था। लालाजी महाराज को मातृ पर वत्सल प्रेम केवल सात ही वर्ष तक प्राप्त हुआ उसके पश्चात् वे पिता की छत्रछाया में पलते रहे, परन्तु बहुत दिनों तक यह भी न रहा उनके सर से पिता जी का भी साया उठ गया। यद्यपि काफी जायदाद उन्होंने बेच दी थी परन्तु फिर भी काफी जायदाद शेष थी। पूज्य लालाजी महाराज के लिए तो ईश्वर की और ही इच्छा थी । वे इस स्थूल जायदाद के लिए तो आये नहीं थे उनसे परमात्मा को कुछ और कार्य कराना था, इस कारण उनका मुकदमा एक राजा मैनपुरी से चल गया जिसमें उनकी सारी सम्पत्ति यहाँ तक कि मकान एवं घर के जेवर तक बिक गये। उसी समय इनके बड़े भाई जिनको उनके पिता ने गोद लिया था, उनका भी स्वर्गवास हो गया। चारों ओर से उनपर बोझ पड़ गया परन्तु शायद यही उनकी परीक्षा थी और इसी परीक्षा के पश्चात् ईश्वर ने उन्हें सच्चे पीर, रहबर से मिला दिया। घटना इस प्रकार है कि पूज्य लालाजी महाराज जहाँ पढ़ने के लिए एक कोठरी लेकर रहते थे, वहीं बगल वाली कोठरी में उस समय के पूरे समर्थ सद्गुरु शिरोमणि मौलवी फज्ल अहमद साहब रहा करते थे जो कि एक सूफी सन्त थे और नक्शबंदिया खानदान के थे। हिन्दुओं में चक्रविद्या तो अवश्य थी परन्तु प्रायः लुप्त सी हो गयी थी और केवल मुसलमान फकीरों तक ही सीमित रह गयी थी। लाला जी महाराज एक बार जाड़े के दिनों में घनघोर वर्षा होती हुई अन्धेरी रात में फतेहगढ़ से लौटे थे वह काफी भीग गये थे और ठंढ से काँप रहे थे। जब वह अपनी कोठरी पर आये उस समय ठंड से काफी परेशान थे। ठीक उसी समय सूफी साहब ने अपनी स्नेहसिक्त दृष्टि उन पर डाली और उनके श्री मुख से अचानक से शब्द निकल गये '' ऐसा तूफान और इस वख्त आना'' कहा जाता है कि इन शब्दों में प्रेम का जादू था कि वह वशीभूत हो गये और सूफी साहब ने कपड़े बदल कर आने का कहा। जब पूज्य लालाजी महाराज वहाँ गये तो कहते हैं कि उन्होंने उनके अपनी रजाई ओढ़ा दी और रजाई दे दी कि तुम्ही हो मेरे मिशन को

फैलाने वाले। यह ऐसा प्रेम था जिसमें किसी भी बात का बन्धन नहीं, न जाति, न धर्म, न उम्र और न कौम का। यह प्रेम का रास्ता है, प्रेमी और अधिकारी सब कुछ ले लेता है। एक मुसलमान फकीर ने प्रेम से अपने प्रेमी प्रिय को सब कुछ बख्श दिया। वह दौलत जिसकी एक झलक मात्र पा जाने से सारी दुनिया की दौलत ठीकरे के समान प्रतीत होती है। यह तरीका सीने बा सीने का है। स्वयं पूज्य लालाजी ने लिखा है कि–

''हे परम दयालु! आपके रहम ने मुझे बहुत दिनों तक बे हिदायत नहीं छोड़ा बल्कि उम्र के उन्नीसवें साल में एक मुबारिक दिन मेरी तमाम हस्ती को हमेशा के लिए एक मुजसिसम रहीम पंथ के दिखाने वाले ज्ञान और विज्ञान के दीपक के सुपुर्द कर दिया। इस सच्चे रास्ते के दिखलाने वाले ने पहले ही दिन मेरे कानों में फूँक दिया कि तेरी हस्ती पहले ही दिन से असलियत के जानिब मायल है।''

✶ ✶ ✶ ✶

''मेरे रहनुमा ने ऐसा इशारा देकर मुझको महज मेरे ही ऊपर नहीं छोड़ दिया बल्कि खुद साये की तरह हर बख्त साथ रहकर अपनी खास तवज्जह जाहिरी और अन्दरूनी से मेरी निगाहें दाश्त फरमाई।''

ऐसी है इस परम्परा की शान। हमारे बुजुर्गों की यही शान है यही विशेषता है कि वह हर समय अपने प्रेम दृष्टि से अपने सेवक की ऐसी संभाल करते हैं जैसे पलक आँखों की करती है। केवल दीन ही नहीं दुनिया की हर मुसीबतों में भी पिता की तरह, सखा की तरह रक्षा करते हैं। सच्ची याद करते ही उनका रूप सामने आ जाता है। जाने अनजाने सचेत करते रहते हैं। पग–पग पर उनकी कृपा बरसती रहती है। जिनको दुर्भाग्यवश ऐसा प्रेम न मिला हो वे इस पर सहज विश्वास नहीं कर सकते परन्तु जिनको इसका अवसर परमात्मा की दया से मिला है वह अच्दी तरह जानते हैं। उस प्रेम को, आनन्द को, अवलम्ब एवं मस्ती को जो उनके एक–एक दृष्टिपात भर से हो जाती है। एक ऐसी कैफियत जो अनुभव ही की जा सकती है कहीं लिखी नहीं जा सकती है। उनके उपस्थिति होने मात्र से वातावरण में नूर बरसने लगता है। एक ऐसी शान्ति जो आनन्द से परिपूर्ण होती है। ऐसी है इनकी शान। ऊपर कहा जा चुका है कि महात्मा रामचन्द्र जी उर्फ लाला जी महाराज एक जन्म सिद्ध फकीर एवं सन्त थे, जिन्होंने चक्र विद्या की सम्पूर्णता प्राप्त कर उसे हिन्दुओं में प्रचार किया। उनके सम्पर्क में जो भी आया उसको उन्होंने अपना सा ही कर दिया और उनके मिशन को फैलाते रहे। उन्हीं के शिष्यों में एक जो कि उनके गुरुमुख शिष्य थे यानी मुराद थे। उनका नाम डा0 श्रीकृष्ण लाल जी भटनागर सिकन्द्राबादी था। आप महात्मा रामचन्द्र जी

महाराज के मुँह बोले शिष्यों में से थे। लालाजी महाराज उनको बहुत ही प्रेम करते थे। लालाजी महाराज के निर्वाण के पश्चात् उनके शिष्यों ने उनका कार्यभार संभाला। अब पूरे उत्तरी भारत में उनका चलाया हुआ मिशन अपनी शाखाओं में सत्संग का कार्यर्ध कर रहा है। श्री डा0 श्रीकृष्ण लाल जी महाराज जो कि उनके खलीफा अव्वल थे और जिनसे वे बहुत प्रेम करते थे, उन्होंने उनके कार्य को बहुत ही प्रेम से संभाला ाअैर न जाने कितने अशान्ति भूले–भटकों को राह दिखाई। पूज्य डा0 श्रीकृष्ण लाल जी जिनको सभी सत्संगी प्रेम के किसी न किसी नाते से कोई चाचा जी, कोई भाई साहब कोई पिता जी कोई ताऊ जी, बाबाजी और नाना जी के नाम से भी पुकारते थे, क्योंकि उनको गुरु कहलाना अच्छा नहीं लगता था। मैं सेवक उनको सदैव ताऊ जी ही कहा करता था क्योंकि वे मेरे पूज्य बाबूजी डा0 श्यामलाल जी सक्सेना के गुरुभाई तो थे ही उसके अतिरिक्त उन दोनों में उस तरह का प्रेम था जिस तरह श्री रामचन्द्र जी एवं भरत जी ने एक दूसरे को हृदय से सात्विक प्रेम किया था। प्रेम की यह उत्कट दशा थी कि एक दूसरे के लिए अपने प्राण भी न्यौछावर करने के लिए उद्धत थे। केवल परमार्थ ही नहीं, घर के छोटे–बड़े कार्य भी उनक रजामन्दी से ही होते थे। इस प्रकार आगे सेवक उन्हें ताऊ जी महाराज के ही नाम से सम्बोधित करेगा।

जन्म एवं परिवार परिचयः–

पूज्य ताऊ जी महाराज का जन्म 15 अक्टूबर सन् 1894 में माउन्ट गुमरी पंजाब में हुआ था। आपकी पुण्य जन्मभूमि सिकन्द्राबाद के नाम से विख्यात है। आप एक प्रतिष्ठित भटनागर कायस्थ कुल के भूषण थे। आपके पूज्य पितामह जी का नाम पूज्य श्री वृषभानु जी भटनागर था। पूज्य ताऊ जी कहते थे कि वे बड़े भी धार्मिक स्वभाव के थे और उनका नाम प्रतिष्ठित व्यक्तियों में से था। आपके पूज्य पिता जी का नाम श्री भगवत दयाल जी भटनागर था। वे पी0डब्लू0डी0 विभाग में ओवरसियर के पद पर थे। आपकी श्रीमता जी पूज्यनीया श्रीमती कृष्णा देवी जी थीं। जिन्होंने व्यासगद्दी श्रवण सिंह साहब से उपदेश लिया था। वे बहुत ही धार्मिक प्रवृत्ति की स्त्री थीं तथा अत्यधिक समय पूजा पाठ में ही व्यतीत करती थीं। सेवक को वह बहुत ही प्रेम करती थी। मैंने देखा था वो अपनी कोठरी में बड़ी शान्त एवं उदासीन भाव से पूर्ण, अपने पूजापाठ में लगी रहती थीं। अपने ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते वे पूज्य ताऊ जी महाराज को अत्यधिक प्रेम करती थीं और अन्त समय तक उन्हीं के पास रहीं। यद्यपि उनके अतिरिक्त उनके तीन और पुत्र थे जो सभी समाज में प्रतिष्ठित पदों पर थे परन्तु ब्रह्मविद्या की तरफ उनका कोई विशेष

सम्मान एवं रुझान न था। पूज्य ताऊ जी के पूज्य पिता जी ने भी परमसंत राय साहब सालिगराम जी महाराज से उपदेश लिया था परन्तु उनकी प्रवृत्ति बहुत स्थायी न रह सकी। कभी–कभी पूज्य ताऊ जी से भी प्रारम्भ में लालाजी के पास जाने से नाराज होते थे। मैंने उनके ही श्रीमुख से यह सुना था पर बाद में वे भी उनके ही मतानुयायी हो गये थे। पूज्य स्वर्गीय गिरवर कृष्ण भटनागर इन्कमटैक्स आफिसर थे। दूसरे पूज्य राजकृष्ण भटनागर जो अब भी रिटायर्ड हेल्थ आफीसर हैं और गाजियाबाद में ही रहते हैं। तीसरे पूज्य जगदीश कृष्ण भटनागर जी हैं जो इस समय मंसूरी में पी0डब्लू0डी0 विभाग में असिस्टेंन्ट इन्जीनियर के पद पर कार्यरत हैं। ये सभी लोग पूज्य ताऊ जी से बहुत प्रेम करते थे और वह प्रेममय तो प्रेम के अथाह सागर ही थे। वे तो सभी से ही बहुत प्रेम करते थे। सब उनके अपने ही थे, पूज्यताऊ जी का विवाह 1916 के फरवरी–मार्च के महीने में हरिद्वार के एक संभ्रान्त परिवार में सम्पन्न हुआ था। पूज्य ताऊ जी की धर्मपत्नी पूज्या श्रद्धेय ताई जी श्रीमती चंदादेवी एक अत्यन्त ही सुशील एवं पतिपरायण स्त्री थीं। आजीवन वे अपने हाथ से ही रोटी बनाकर पूज्य ताऊ जी को खिलाती थीं। उनका शरीर कुछ भारी था और बाद में उठने बैठने में भी कुछ तकलीफ होती थी परन्तु फिर भी वह सभी सत्संगियों से पुत्रवत् स्नेह करती थीं। वह मेरे समस्त परिवार को अपने परिवार से अलग न समझतीं थीं। हम बच्चों को मातृतुल्य स्नेह करती थीं। अपने बच्चों में और हम लोगों में किंचित मात्र भी अन्तर नहीं समझती थीं। मुझे जहाँ तक याद है और जहाँ तक मैं जानता हूँ कि वह मेरे पूजय बाबूजी (डा0 श्याम लाल जी) को इतना स्नेह करती थीं कि कभी भी उनकी बात नहीं टालती थीं। वे स्नेह एवं प्रेम की मूर्ति थीं। एक घटना से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह किस प्रकार हम लोगों से प्रेम करती थीं। एक बार कुछ ऐसी आर्थिक कठिनाई आ गई जिसके कारण सिकन्द्राबाद का पूर्वजों वाला मकान गिरवी रखने की नौबत आ गयी उस समय पूज्यनीय बाबूजी (डा0 श्यामलाल जी) की भी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी जिससे वह संकट दूर हो पाता। ऐसी स्थिति में पूज्यनीय बाबूजी (डा0 श्यामलाल जी) ने पूज्या ताई जी से कहा कि यदि वे इस समय अपने जेवर गिरवीं रख दे ंतो यह संकट टल सकता है और यह जेवर बाद में छुड़ा लिया जायेगा। मैंने पूज्य बाबूजी (डा0 श्यामलाल जी) के श्रीमुख से ही सुना है क्योंकि मैं काफी छोटा था कि पूज्य ताई जी ने क्षणिक देरी न करते हुए बिना हिचक, जेवरों को पोटली में बाँध कर पूज्य बाबूजी (डा0 श्यामलाल जी) के हाथों में अर्पित कर दिया। यह था हमारे परिवार का अटूट प्रेम का एक मिसाल। स्त्रियों को स्वभाविक रूप से अपने जेवरों से अत्यधिक मोह होता है। परन्तु वृहद् हृदया

ताई जी ने जेवरों का त्याग कर सारे परिवार को संकट मुक्त कर दिया। स्वयं पूज्यनीय ताऊ जी उनसे बहुत प्रेम करते थे। वह स्वयं कहते थे कि उन्हें उनसे विशेष प्रेम था। जिन लोगों को उनके सम्पर्क में आने का सुअवसर आया है वह उनके शान्ति स्वरूप को जानते होंगे। सेवक वहीं बहुत दिन उनके पास पुत्रवत रहा। इससे मैं स्वयं तो उनसे बहुत ही प्रभावित रहा हूँ और अब भी जब कभी मुझे अपना बचपन याद आता है तो उसके साथ पूज्य ताई जी की स्मृति जुड़ी पाता हूँ। वे साक्षात् लक्ष्मी थी। पूज्य ताऊ जी के तीन पुत्र व दो पुत्रियाँ हैं। उनकी ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती शकुन्तला भटनागर जो लखनऊ में रहती हैं और परिवार सहित खुश हैं। उनकी दूसरी पुत्री श्रीमती शान्ती भटनागर भी अपने परिवार में सुखी हैं। उनकी ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती शकुन्तला भटनागर जो लखनऊ में रहती हैं और परिवार सहित खुश हैं। उनकी दूसरी पुत्री श्रीमती शान्ती भटनागर भी अपने परिवार में सुखी हैं। उनके ज्येष्ठ पुत्र श्रीयुत डा0 हरिकृष्ण भटनागर जो कि रामाश्रय सत्संग सिकन्द्राबाद के आचार्य हैं और सिकन्द्राबाद में ही प्राइवेट प्रेक्टिस करते हैं। उनको आचार्य की पदवी प्रदान की गयी है। वह अपने कार्य का संपादन करते हैं, पूज्य ताऊ जी के निर्वाण के बाद सिकन्द्राबाद का भण्डारा आदि उन्हीं के निरीक्षण में होता है।

उनके द्वितीय पुत्र श्री राधेकृष्ण भटनागर एवं तृतीय पुत्र श्री गोपालकृष्ण भटनागर हैं। दोनों ही नेक सुशील एवं धर्मपरायण हैं परन्तु ब्रह्मविद्या की ओर उनका अभी अधिक सम्मान एवं रुझान नहीं है। वे गाजियाबाद में रहते हैं और परिवार सहित खुश हैं।

बचपनः—

पूज्य ताऊजी को बचपन में फकीरा के नाम से पुकारा जाता था। ''होनहार विरवान के होत चीकने पात'' यह कहावत उनके लिए ठीक ही उतरती है। पूज्य ताऊ जी बचपन से ही बड़े साहसी, स्वतंत्र एवं उत्साही थे। कहते हैं कि बचपन में वे बड़े ही जिद्दी थे इसका कारण उनकी तीव्र इच्छाशक्ति एवं अपूर्व मनोबल ही था। माता—पिता के ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण आपका लालन—पालन बड़े लाड़—प्यार से हुआ था। बचपन में जब आप आठ वर्ष के थे तभी आपको बहुधा श्री कृष्ण जी के दर्शन रात में स्वप्न में होता था और अक्सर उनकी याद में राते रहते थे। यह दर्शन उनको तब तक होता रहा जब तक उन्हें श्रीमान लालाजी महाराज के दर्शन न हो गये। बचपन से ही आप खेल में बड़े शौकीन थे। गुल्ली डंडा से लेकर फुटबाल तक के सभी खेल वह खेलते थे। फुटबाल उन्हें विशेष रुचिकर था। बहुधा

पतंग भी उड़ाया करते थे। आप बच्चों को भी पतंग लाकर दिया करते थे। बचपन से ही उन्हें दूध का बहुत शौक था। बचपन में गाय या भैंस का दूध खेल ही खेल में थन से ही पी जाया करते थे। उनमें अगुवा बनने की प्रवृत्ति बचपन से हीथी। किसी भी कार्य को जो उनकी शक्ति और सामर्थ्य से बाहर भी होता था उसको भी करने में जरा भी नहीं हिचकिचाते थे। ऐसा था बाल्यकाल उन महापुरुष का।

व्यक्तित्वः—

आपका कद लम्बा तथा शरीर सुगठित था। बाहें बड़ी ही लम्बी करीब—करीब घुटनों को छूती थीं। शरीर बड़ा ही हृष्ट—पुष्ट एवं बड़ा ही मनमोहक था परन्तु हाथ—पैर एवं शरीर बहुत ही कोमल था। सिर के बाल बहुत ही मुलायम थे। वरद्हस्त थे अर्थात हथेलियाँ बहुत ही मुलायम परन्तु बड़ी थीं। विशाल भुजायें बड़ी ही शोभनीय थीं। आपका माथा बहुत ही चौड़ा एवं सुन्दर था। पहले आप दाढ़ी नहीं रखते थे परन्तु 1963 से आपने दाढ़ी रख लजी थी जिससे आपका चेहरा काफी भव्य, सुन्दर एवं आकर्षित करने वाला हो गया था। आपकी आँखों में एक अजीब प्रकार का आकर्षण था। पूरी आँख आप कभी—कभी खोलते थे। उनकी ईष्वर के प्रेम से युक्त आँखें भारी और इतनी सुन्दर थीं कि यदि वे किसी की तरफ देख लेते तो वह उनका ही हो जाता था। कभी कभी जब आप अपने गुरुदेव के प्रेम के आवेश में आ जाते तो आप फफक कर रो पड़ते थे। माथे पर दो उंगलियों को वे बहुधा फेरा करते थे। बोली एवं वाणी में इतना माधुर्य था कि लगता था सुनते ही जाओ। विषय चाहे जितना ही कठिन हो जब वे अपने वाणी माधुर्य से व्याख्या करते तो लगता कि एक अजीब कैफियत उनकी आवाज में है। ऐसा लगता कि इनका बोलना ही न बंद हो। लोग मंत्र मुग्ध से सुनते रहते। वह माधुर्य था उनकी वाणी में कि जब कभी पैर छूते समय कहते ''बेटे खुश रहो'' या ''आओ नन्हें'' तो ऐसा लगता कि एक ऐसा प्रेम झर रहा है कि जिसका वर्णन किया ही नहीं जा सकता है। वह तो केवल अनुभव ही करने की बात थी।

आप धोती कुर्ता जवाहर बंडी तथा जाड़ों में गरम स्वेटर व कोट पहनते थे। कोट प्रायः लम्बा होता था। सिर पर सदैव टोपी रहती थी। गरम कुर्ते का प्रायः जाड़े में प्रयोग करते थे तथा कुर्ता भी प्रायः लम्बा ही होता था। मोजा और पम्प जूता या किरमिच का जूता पहनते थे। जाड़े में पूजा करते समय प्रायः शाल व गरम कम्बल ओढ़ लेते थे। उनके कपड़े बहुत कीमती नहीं होते थे परन्तु साफ सुथरे एवं सादे होते थे। पूज्य ताऊ जी की छवि इतनी आकर्षक तथा इतनी माधुरी थी कि उसका वर्णन करना मेरी लेखनी से बाहर

है। बहुत पहले वह चौड़ी मोहरी का पाजामा भी पहनते थे तथा बाहर आने जाने में पैन्ट का भी प्रयोग कर लेते थे। इसके बावजूद अधिकतर घोती का ही प्रयोग करते थे। बनियाइन आस्तीनदार एवं ढीली तथा लम्बी पहनते थे। दुकान को छोड़ने के पश्चात और पूर्ण रूप से अवकाश लेने पर उन्होंने सदैव धोती का ही प्रयोग किया।

दिनचर्याः–

पूज्य ताऊ जी सदैव ब्रह्म बेला में ही उठते थे। प्रायः रात के दो बजे भी उठकर अभ्यास कर लेते थे। जब कोई सत्संगी भाई आते तो ताऊ जी रात को ही उठकर और सोते हुओं को स्वयं जागाकर तवज्जह देते रहते थे। प्रातः ब्रह्म बेला में उठकर नित्यक्रिया से निवृत्त होकर, चाय पीने के पश्चात पूजा करते थे। सुबह दुग्धपान करने के पश्चात साढ़े सात बजे तक दुकान चले जाते थे। वहाँ पर मरीजों को देखने आदि के बाद आप एक बजे के करीब घर वापस आते और भोजन के पश्चात् थोड़ा आराम करते थे। तीन बजे दिन में आप नित्य ही धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन करते थे। करीब तीन, साढ़े तीन या चार बजे आप चाय पीकर पुनः दुकान जाते थे। सायंकाल आप टहलने के लिए जाया करते थे और उसमें पश्चात लौटकर आप स्वयं सन्ध्या करते एवं आये हुए लोगों को भी पूजा पर बैठाते थे। भोजन सदैव रात के नौ या दस बजे ही करते थे। पूजा से निवृत होने पर शौच आदि से निवृत्त होते थे तब लोगों से बातचीत करते एवं उसके पश्चात ही भोजन करते थे। सन् 1958 में आपने अपनी दुकान अपने ज्येष्ठ पुत्र डा0 हरीकृष्ण भटनागर को सुपुर्द करके अपना सारा समय अध्यात्म की ओर लगा दिया। रात दिन उसी प्रभु की लगन में अपने गुरुदेव का सन्देश जन–जन तक पहुँचाते रहे। शरीर के दुर्बल हो जाने पर भी उनकी इस दिनचर्या में कोई अन्तर नहीं आया था। आप अपने अन्त समय तक उस दिव्य संदेश को सभी प्रेमी भाइयों तक पहुँचाते रहे।

भोजन एवं खान–पानः–

आप भोजन बहुत ही सूक्ष्म करते थे। आपको दूध बहुत ही प्रिय था। आप दूध खूब गरम एवं मलाईदार पीते थे। मीठा, दही, रबड़ी और मलाई भी आपको पसंद थी। सब्जी में आपको काशीफल, आलू, गोभी काफी पसन्द था। आपका भोजन सादा ही होता था उसमें रोटी, दाल, सब्जी, दही या रायता होता था। आप पहले भोजन के पश्चात् मीठा का प्रयोग करते थे परन्तु बाद में मधुमेह की बीमारी हो जाने के कारण आपने मीठा छोड़ दिया था, तथा

भोजन में परहेज करते थे। रोटी बहुत ही कम खाते थे। हल्की–हल्की बहुत ही पतली फुलकियाँ, केवल दो फुलकियाँ ही भोजन में लेते थे। किसी का मन रखने के लिए या अत्यधिक आग्रह पर ही कभी'–कभी एक आदि फुलकियाँ और लेते थे। मूँगफली भी आपको काफी पसन्द था। फलों में पपीता और अमरूद काफी पसन्द था। किसी का दिल न टूटे इसलिए आग्रह पर कुछ भी खा लेते थे। आप शुद्ध शाकाहारी भोजन ही करते थे। आपके भोजन में मांस आदि का प्रयोग नहीं होता था। मिर्च मसाला आदि का प्रयोग भी आप बहुत कम करते थे। आप भोजन की शुद्धता और सात्विकता पर काफी जोर देते थे। कोई व्यक्ति या सत्संगी आ जाता तो उसे भोजन अवश्य कराते थे। जब तक सभी सत्संगी भाई भोजन नहीं कर लेते थे, आप स्वयं भोजन नहीं करते थे। खाने में भेदभाव उन्हें नहीं पसन्द था, वे चाहते थे जो सभी लोग खायें वही मैं भी खाऊँ। सबका इतना ख्याल रखते थे कि जब तक एक–एक से स्वयं पूछ नहीं लेते थे,तब तक उन प्रेममूर्ति को संतोष नहीं होता था।

स्वभावः–

आप बहुत शान्त एवं कोमल स्वभाव के थे। दया की तो आप मूर्ति ही थे। किसी की आँखों में आँसू आप नहीं देख सकते थे। किसी सत्संगी के थोड़े से ही दुःख से आप द्रवित हो जाते थे और जब तक उसका दुःख दूर नहीं कर देते थे, आपको संतोष नहीं मिलता था। सभी से वह बहुत स्नेह करते थे। सहनशीलता और दया के आप भण्डार थे। किसी से कितना बड़ा ही कसूर क्यों न हो जाये, यदि उसने रोकर विनती कर ली तो आप उसके अपराध को क्षमा कर ही देते थे एवं अपने आराध्य से भी विनय करके क्षमा दिलवा देते थे और उसका जिक्र भी नहीं करते थे। वे दया, दीनता और प्रेम की मूर्ति थे परन्तु खुशामद उन्हें जरा भी नहीं पसन्द थी। आप में दिखावट लेशमात्र भी नहीं थी। आप साफ सुथरी बातें ही पसन्द करते थे। आप किसी की बुराई न तो करते थे और न सुनना ही पसन्द करते थे। किसी की बात उठती तो उससे ही पूछ लेते थे। आप अपनी बात को भी कहने में नहीं हिचकते थे। जो भी दिल में आता था वह साफ–साफ कह देते थे दिल में कुछ रखते नहीं थे। प्रत्येक की सहायता के लिए सदैव तैयार रहते थे। न जाने कितने उदाहरण हैं कि आपने उनका जीवन ही बदल दिया है। व्यक्तिगत नाम लिखना व्यर्थ है क्योंकि यदि आपकी दयालुता लिखने लगूँ तो वह स्वयं एक पुस्तक बन जायगी। एक उदाहरण स्वर्गीया कद्दो बीबी का है जिसके बीमार पड़ने पर आपने न केवल आर्थिक सहायता किया वरन् इलाज

हेतु आप स्वयं दिल्ली तक लेकर गये। आप बहुत ही नम्र स्वभाव के थे, गुस्सा बहुत कम ही आता था। यदि कभी क्रोध आ भी जाता तो उसे प्रगट नहीं होने देते थे ताकि किसी का दिल न दुखे। आप भोले स्वभाव के अन्दर बाहर सत्य के साक्षात रूप थे। किसी के बात को भी आप सत्य ही समझते एवं सहज ही विश्वास कर लेते थे। इस सहज विश्वास कर लेने के कारण एवं दया के कारण कई बार आपको हानि उठानी पड़ी जिससे आप कुछ दुःखी भी हो जाते थे। आप जरूरतमंद, विधवाओं एवं अनाथ बच्चों की मदद करना अपना परम् कर्तव्य समझते थे। गुरु–शिष्य कहना–कहलाना आपको पसन्द नहीं था सबको अपने परिवार की तरह प्रेम करते थे। आप सत्संगियों में, आपस में शादी विवाह कर देने का रिवाज बना देना चाहते थे। छोटे से छोटे नौकरों से भी घरवालों का सा प्रेम व्यवहार करते थे। वे कहा करते थे कि नौकर मदद के लिए होते हैं उनसे सौहार्द्य पूर्ण व्यवहार होना चाहिए। वे बच्चों से बहुत प्रेम करते थे एवं बच्चों की बातों से उनका मनोरंजन भी होता था।बच्चे उनके हाथ से प्रसाद आदि लेने में बड़े खुश होते थे। सत्संग के सभी स्त्रियों को वे अपनी पुत्री के समान प्रेम करते थे। सबको बेटी कहते तथा सबसे केवल अध्यात्म की ही नहीं वरन् घर बार वाल–बच्चों आदि सबके बारे में पितावत पूछते थे। सभी सत्संगी भाइयों का न केवल दीन ही वरन् दुनिया की तमाम बातों का भी इतना ध्यान करते जैसे कोई पिता अपने बच्चों की करता है। प्रत्येक के सुख में सुखी एवं दुःख में दुखी होना आपका विशेष स्वभाव था। हर आने वाले के छोटी से छोटी जरूरत का ध्यान रखते थे। आपका व्यक्तिव इतना प्रेममय था कि हर कोई यही समझता था कि वह उसी से प्रेम करते हैं। वह सर्वव्यापी प्रत्येक को बड़े ही स्नेह से अपने पास बैठाते थे। मैंने स्वयं देखा है कि प्रेमीजनों को अपने सिरहाने ही बैठा लेते थे। यदि कोई सत्संगी भाई उम्रदार अर्थात् बुजुर्ग होता तो उसकी बड़ी ही इज्जत करते थे। ये पंक्तियाँ जैसे उन्हीं के लिए हो ''संत हृदय नवनीत समाना''। अनूठे प्रेम की स्पष्ट छाप आप थे। वास्तव में आपका हृदय नवनीत के समान था जो किसी के जरा से दुःख से पिघल जाता और उस दया के आवेश में वे उसकी हर तरह की कठिनाइयों को काट देते थे जिसकी एक दो नहीं सैकड़ों उदाहरण हैं। प्रत्येक सत्संगी एवं प्रेमी भाइयों को उनकी दयालुता का परिचय पता है। कहने का अर्थ यह है कि पूज्यनीय ताऊ जी में दया कूट–कूट कर भरी थी। वे दया के साक्षात अवतार थे। स्वयं लालाजी महाराज ने उनसे कहा था कि ''तुममे दया की माद्दा बहुत है।''

शिक्षाः—

पहले ही कहा जा चुका है कि पूज्य ताऊ जी के पिता जी ओवरसियर थे और उत्तर प्रदेश के फतेहगढ़ जिला में तैनात थे। इस कारण आपकी शिक्षा मुख्यतः वहीं हुई। आपने फतेहगढ़ स्कूल से ही स्कूल लिविंग परीक्षा पास की। आप पढ़ने में बहुत तेज नहीं थे परन्तु आपका व्यवहारिक ज्ञान अलौकिक था। खेल कूद में आप बहुत आगे थे और काफी हृष्ट–पुष्ट एवं चंचल भी थे, हंसमुख होते हुए आप अपने छात्र काल से ही अगुआ रहते थे। मैट्रिक पास करने के पश्चात आपने एक बिसातखाने की दुकान खोल ली, परन्तु उसमें आपका मन नहीं लगा और जल्दी ही उसे छोड़ दिया। तत्पश्चात फतेहगढ़ में ही एक स्कूल में आप लिपिक के पद पर कार्य करने लगे। मन न लगने के कारण आपने उसे भी छोड़ दिया। इसी बीच आपके गुरुदेव महात्मा रामचन्द्र जी महाराज उर्फ लाला जी महाराज ने आपको डाक्टरी पढ़ने की सलाह दी। और आप आगरा मेडिकल कालेज में सन् 1919 में डाक्टरी पढ़ने चले गये और सन् 1923 में डाक्टर हो गये। इस जगह एक दो घटनाओं का उल्लेख करना अति आवश्यक है, जिससे यह सिद्ध होात है कि बुजुर्ग किस प्रकार सर्वांग रक्षा एवं दया करते हैं। जो स्वयं उनके विद्यार्थी जीवन से सम्बन्धित हैं और आप ही के शब्दों में उल्लिखित है।

''स्कूल लिविंग क्लास के इम्तहान में मेरा ज्यामेट्री का पर्चा बहुत ही खराब हो गया था। मुझे परेशान देखकर लाला जी महाराज ने परेशानी का कारण पूछा और कहा ''बरखुरदार! परेशान मत हो। तुमको आम खाने से गरज है या पेड़ गिनने से। तुम पास हो जाओगे।'' और ऐसा ही हुआ। मैं आशा के विपरीत इम्तहान में पास हो गया। स्कूल लिविंग की एक अपूर्व घटना यह है कि मैं साइन्स में बहुत कमजोर था और लोगों का विश्वास था कि मुझे पर्चा आउट करा दिया जाता है इसी से मैं पास हो जाता हूँ। मेरा साइन्स वायबा का इम्तहान था। परीक्षा लेने वाले ने कुछ ऐसे प्रश्न पूछे जो स्कूल लिविंग स्टैन्डर्ड से बहुत ही ऊँचे प्रश्न थे। मैं सभी प्रश्नों का उत्तर बिना हिचक देता चला गया। जब अन्तिम प्रश्न पूछा गया और मैं उत्तर दे ही रहा था कि मुझे ध्यान आया कि ऊपर के सभी प्रश्नों के उत्तर गलत हो गये हैं। बाद में पता चला कि जब तक ध्यान नहीं था तब तक के सभी उत्तर सही थे और जब ध्यान आ गया तो अन्तिम प्रश्न का उत्तर गलत हो गया।'' यह घटना स्वयं पूज्य ताऊ जी के श्रीमुख से सुनी थी जिसका मैंने उल्लेख किया है। एक और अपूर्व घटना जो उनके विद्यार्थी जीवन से सम्बन्धित है उसको भी उल्लिखित करना केवल वंश के महापुरुषों के दयालुता का परिचय देना है। पूज्य ताऊ जी कहा करते थे कि जब पूज्य लालाजी महाराज ने

उन्हें डाक्टरी पढ़ने जाने की इच्छा प्रकट की उस समय उनकी आयु अधिक थी। उस घटना को भी उन्हीं शब्दों में उल्लेख करता हूँ:–

मैं मेडिकल कालेज आगरा में अपना प्रवेश चाहता था परन्तु मेरी आयु अधिक थी। मैंने अपनी आयु कम लिख कर फार्म भर दिया और मेरा दाखिला हो गया। बाद में छानबीन हुई, मैने घबराकर आपको पत्र लिखा, उत्तर में आपने लिखा ''ताज्जुब है! तुमको परमात्मा पर भरोसा नहीं है। वह सर्वशक्तिमान है, जो चाहे कर सकता है, उस पर भरोसा रक्खो। अपना सर्टिफिकेट दे दो और सही–सही बात कह दो। कुदरत का तमाशा देखो क्या होता है'' मैंने सर्टिफिकेट पेश कर दिया। प्रिंन्सिपल के पूछने पर मैंने उत्तर दिया कि मेरी आयु तेइस वर्ष है, मैंने भूल से इक्कीस वर्ष लिख दिया है।'' प्रिन्सिपल साहब कहने लगे ''ठीक है! तुम्हारी असली आयु इक्कीस वर्ष है और गलती से तेईस वर्ष लिख गई है'' सर्टिफिकेट पर लिख दिया कि – By appearance 21" ।

यह अपूर्व घटनायें पूज्य ताऊ जी के शिक्षा के सम्बन्ध में थीं जो यहाँ उल्लिखित कर दी गयी हैं। इस प्रकार आपने अपनी सांसारिक शिक्षा सन् 1923 में डाक्टरी पास करके पूरी कर दी।

व्यवसायः–

पहले कहा जा चुका है कि आपने पहले बिसातखाने की दुकान खोली न चलने पर उसे बन्द कर दिया। पुनः सन् 1917 में आप गवर्नमेंट हाई स्कूल फतेहगढ़ में क्लर्क की जगह पर तैनात हुए परन्तु डेढ़ वर्ष इस जगह पर काम करने के पश्चात उसे भी छोड़ दिया। तत्पश्चात आप डाक्टरी पढ़ने चले गये और सन् 1923 में आप डाक्टर हो गये। प्रारम्भ में कुछ दिन तक आपने सरकारी नौकरी कर ली पर उसमें रुचि न होने के कारण कुछ दिन उपरान्त उसे भी त्याग दिया और उत्तरप्रदेश के सिकन्द्राबाद में आपने अपनी निजी प्रैक्टिस प्रारम्भ कर दी। प्रारम्भ में आपको काफी आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। यह इससे स्पष्ट होता है कि पूज्य ताऊ जी ने पूज्य डा0 श्यामलाल जी से जिनकी नई प्रैक्टिस थी कहा था ''कि तुम्हें तब भी परमात्मा दोनों वख्त रोटी देता है परन्तु हमारा तो ऐसा भी वख्त गुजर रहा है कि दोनों वख्त की रोटी भी नहीं हो पा रही है।'' थोड़े समय पश्चात् पूजय ताऊ जी की प्रेक्टिस खूब चली और लोग उनहें बड़ी ही आदर की दृष्टि से देखने लगे। डाक्टरी के लिहाज से आस पास के डाक्टरों में प्रमुख स्थान प्राप्त हो गया। आप अपने पैत्रिक स्थान के सामाजिक क्षेत्र में काफी लोकप्रिय एवं आदरणीय थे। सिकन्द्राबाद के स्कूल कालेजों के प्रबन्धक तथा

मैनेजर और प्रेसीडेन्ट भी रहे। व्यवसायिक दृष्टिकोण से आप बहुत सम्पन्न थे और रोगियों की चिकित्सा सेवा आप प्रेम एवं लगन से करते थे। पूज्य ताऊ जी को महात्मा रामचन्द्र जी महाराज उर्फ लालाजी महाराज से यह वरदान प्राप्त हुआ था कि उनके रोग की तसदीक कभी गलत नहीं होगी परन्तु साथ में यह हिदायत थी कि वे संसय विहीन तसदीक कभी न करें क्योंकि उस मरीज को यदि वह रोग नहीं होगा तो हो जायेगा। पूज्य लालाजी महाराज ने कहा था कि पूज्य ताऊ जी का स्थान महामाया का स्थान है इसलिए जो कहोगे वह सत्य हो जायेगा। पूज्यपाद लालाजी महाराज की भाँति ही पूज्यनीय ताऊ जी को भी व्यवसाय के रूप में डाक्टरी पेशा पसंद था क्योंकि सेवक को भी उन्होंने डाक्टरी पढ़ने के लिए ही आज्ञा दी थी।

"It is a function of the Eternal Divine' law that whenever Spirituality decays and sinful materialism becomes rampant in any part of the world especially in India, God gracious Sends a Divine Messenger to enlighten and strengthen the faith of the people In Divine wisdom in order to help the humble one to get out of the rut of their evil ways of life. Undoubtedly the glorious role of Poojay great Lala ji maharaj and Chachaji Maharaj and successively Poojay Tauji Maharaj Ji was for the guidance of the people of the time."

पूज्य ताऊ जी का पूज्यपाद लालाजी से भेंट एवं अध्यात्म शिक्षा का प्रारम्भः—

यह एक ईश्वरीय नियम है कि ईश्वर जिसको जैसा बनाना चाहता है, उसे वेसे ही रास्ते पर लाकर खड़ा कर देता है अर्थात् उसको उसके रहबर से मिला देता है, जो पहले ही दिन फूँक देता है कि तुम संसार में किस लिए आये हो। जिस प्रकार मनुष्य को अपने शुभाशुभ कर्मों के अनुसार ही अपना निश्चित भाग प्राप्त होता है ठीक उसी प्रकार अध्यात्म में भी प्रत्येक का अपना—अपना निश्चित भाग निश्चित महात्माओं के पास रहता है। संत अथवा अवतार जब इस संसार का उद्धार करने के लिए अवतरित होते हैं तो अपने साथ निश्चित उद्देश्य की पूर्ति हेतु अपने शक्तियों को भी अवतरित करते हैं। ऐसी ही अवतरित आत्माओं को अवतार ली हुई आत्मा कह देती है कि तुम मेरे हो! भगवान श्री राम के साथ लक्ष्मण जी, भगवान कृष्ण के साथ बलदेव जी, परमसंत रामकृष्ण परमहंस के साथ स्वामी विवेकानन्द जी आदि इसके प्रमाण हैं। यही आत्मायें गुरुमुख या मुराद कहलाती हैं। इनका संसार में आने का मुख्य उद्देश्य अपने गुरु के मिशन या परमात्मा का नाम फैलाना ही होता

है। यही बात पूज्य महात्मा रामचन्द्र जी महाराज उर्फ लालाजी महाराज एवं महामना पूज्य ताऊ जी के साथ थी। वह पूज्य लालाजी महाराज के मुराद थे। ऐसे मुराद, ऐसे प्रिय जिनको देखते ही एक नजर में पहचान लिया कि इसका और मेरा उद्देश्य एक ही है। पूज्य ताऊ जी पूजयपाद लालाजी से प्रथम भेंट का विवरण करते समय प्रेम विह्वल हो जाते थे, आँसू उनकी आँखों से अपना स्थान छोड़कर धरती की शरण लेती थी एवं रोमावली पुलकित हो जाती थी। उनके प्रथम मिलन की घटना को मैं उन्हीं के शब्दों में पाठकों के समक्ष रखता हूँ जो उनके महान चरित्र का स्वयं परिचायक है।

''अक्टूबर सन् 1914 की घटना है कि मैं सेवक विद्यार्थी जीवन में था और गवर्नमेंट स्कूल फतेहगढ़ में दसवीं कक्षा में पढ़ता था। एक दिन सेवक के पिता जी ने एक चेक खजाने से रूपया लाने के लिए दिया। जब सेवक खजाने में चेक लेकर क्लर्क साहब के पास गया तो उनहोंने सेवक की ओर ध्यान से देखा और एक आनन्द की लहर सारे शरीर में दौड़ गयी। बिजली का तार छूने से तमाम शरीर में जिस प्रकार बिजली दौड़ जाती है ठीक उसी प्रकार सेवक के तमाम खरीर में विद्युत का सा संचार हो गया। सेवक के लिए यह पहला अवसर था सेवक घबरा गया और आँखें नीची कर ली। कुछ समय पश्चात वह हालत जाती रही। दो–तीन घण्टे पश्चात जब सेवक खजाने से रूपया लेकर वापस आ रहा था तो बरामदे में उन्हीं क्लर्क महोदय को टहलता पाया। सेवक ने उनकी तरफ पुनः देखा। ज्यों ही आँख का मिलना था पुनः वही हालत हो गयी जो पहली बार हुई थी। इस बार केवल आनन्द की लहर ही न थी परन्तु उसके साथ प्रेम भी सम्मिलित था। जो अपनी ओर खींच रहा था। मेरे मन में विचार उठा कि ये सज्जन कोई मिस्मराइजर हैं। तबियत पास बैठने को और बात करने को चाहती थी पर हिम्मत न हुई और दिल पर काबू करके बिनाबात–चीत किए हुए ही घर वापस चला आया। करीब तीन–चार दिन पश्चात मैं सेवक परेड ग्राउन्ड के मैदान में एक स्थान पर बैठा हुआ था, थोडत्री देर पश्चात् वही सज्जन टहलते हुए आ गये। मैंने उठकर नम्रता पूर्वक नमस्कार किया और पूछा 'क्या आप किसी विद्यार्थी से मिलना चाहते हैं जो वहाँ खेल रहे हैं, उनमें से हो तो आज्ञा दीजिए मैं बुला लाऊँ। आपने कहा ''नहीं! हमें किसी भी विद्यार्थी से नहीं मिलना है मैं तो केवल हवाखोरी के लिए इधर चला आया हूँ।'' यह कहते हुए वह सज्जन एक तरफ चल दिए और में बातचीत करने की अभिलाषा अपने मन में ही दबाकर रह गया।

उसी रात को स्वप्न में एक वृद्ध फकीर दिखाई दिए जो कभी ओउम् कभी अल्लाह और कहीं राम की आवाज लगाते थे। शरीर पर कभी कभी

सुनहरे, कभी रेशम, कभी टााट के कपड़े और कभी थेगली ही थेगलियाँ थीं और कभी एक दम नंग धडंग दिखाई पड़ते थे। आदर भाव से सेवक ने चरण छूने चाहे तो उन्होंने यह कहकर कदम हटा लिया कि ''हम दुनियाँ के कुत्तों से पाँव नहीं छुआते।'' और सेवक को बचपन के हालात बतलाने लगे तथा नसीहत करने लगे कि ''क्या करने आया था और क्या करने लगा और वख्त है, संभल जा''। सेवक उनके पास से हटकर दूसरी तरफ चला गया परन्तु जहाँ जाता था वहीं वह फकीर दिखलाई पड़ते थे। वही उनके कपड़े थे वहीं सदा थी और वही नसीहत। यही हालत सारी रात रही। सुबह जब मैं उठा तो तबियत परेशान थी। क्योंकि सेवक को अक्सर वहीं स्वप्न दिखाई देते थे। जो स्वप्न आगे चलकर घटनाओं की सूरत में बदल जाते और सत्य सिद्ध होते थे।

वह रविवार का दिन था। सेवक के कुछ साथी प्रत्येक रविवार को एक सन्त के पास आन्तरिक अभ्यास करने जाया करते थे। जिनकी वे बहुधा प्रशंसा किया करते थे। सेवक उनकी बात सुनकर हँसी उड़ाया करता था। उस रविवार को सेवक के एक साथी ने कहा ''क्या तुम भी हमारे साथ चलोगे?' सेवक इस विचार से कि तबियत बहल जायेगी, उनके साथ चला गया। जब महात्मा जी के घर पहुँचा तो यह देखकर आश्चर्य हुआ कि यह वही सज्जन थे जिनके दर्शन सेवक ने खजाने एवं परेड ग्राउन्ड पर किए थे। आप जमीन पर बिछी चटाई पर बैठे थे। मुझे देखकर आपने कहा ''श्रीकृष्ण भाई तुम कैसे आ गये?'' सेवक ने निवेदन किया कि मैंने रात एक स्वप्न देखा है और ताबीर स्वप्न (स्वप्न का आशय) जानना चाहता हूँ। आपने कहा ''यह ख्वाब नहीं वाकया है। मैं मुद्दत से तुम्हारी तलाश में था। तुम मेरी बिछुड़ी हुई आत्मा हो। मैंने तुमको पहली बार खजाने में रेखा और पहचान लिया। मैं तुमको कई दिन से बुला रहा था परन्तु तुम नहीं आये। रात जो फकीर तुमने देखा वह मैं ही था और तुमको बुलाना मकसूद था (बुलाना चाहता था) ताबीर (स्वप्न का आशय) ये है कि मैं तुम्हारा हूँ और तुम मेरे हो। अब तुम यहाँ से नहीं जा सकते'' लालाजी महाराज से पूज्य ताऊ जी की यह प्रथम भेंट थी। लालाजी महाराज ने ताऊ जी के हृदय की हालत जानकर यह फरमाया–

''मैं तुमको समझता हूँ। तुम्हारी बेगरजाना मुहब्बत को समझता हूँ। तुमको जिस चीज की तलाश है उसकी दुनियादारों को हवा तक नहीं लगी है। वे तुमको क्या समझेंगे। बदनाम करते हैं तो करने दो उनका कोई कुसूर नहीं है। तुम्हारी तबियत जब चाहे तब आ सकते हो। मुझको तुमसे मिलकर खुशी होगी।'' यह थी पहली भेंट उन महापुरुष की। अध्यात्म की पहली

सीढ़ी। पूज्य ताऊ जी कहते थे कि दूसरों को देख कर देखा देखी उनको भी शौक होता था कि वह भी कुछ अभ्यास करें, कुछ साधना करें। परन्तु उनको पूज्यपाद लालाजी ने कोई साधना बताया ही नहीं था। सारी साधना उसी निःस्वार्थ प्रेम की प्राप्ति के लिए ही थी। वह आप में असीमित था ही पूज्य ताऊ जी के चरित्र की यह विशेषता थी कि वह अत्यन्त उत्साही एवं अदम्य साहस वाले पुरुष थे इसीलिए उन्होंने पूज्यपाद लालाजी से निवेदन किया कि उन्हें भी कुछ साधना बता दें। इसपर पूज्यपाद लालाजी महाराज ने गदगद होकर कहा ''तुमको कोई जरूरत साधना करने की नहीं है। मैं यह सब साधना तुम्हारे लिए ही कर रहा हूँ।'' कैसा आत्म समर्पण था। आज के युग में जो लोग दुर्भायवश ऐसे महापुरुषों के सम्पर्क में नहीं आये हैं वह सहज में विश्वास भी नहीं कर सकते हैं। यह विद्या प्रेम की है। प्रेम ही इसका आदि है और प्रेम ही इसका अन्त है। उस प्रीतम के जमाल का असर ही ऐसा है कि खाक को भी अक्सीर कर देता है। यह अध्यात्म की विद्या हमारे बुजुर्गों की सीता–ब–सीना चलती आ रही है। अर्थात गुरु अपने प्रेम से अपनी तमाम विद्या को अपने शिष्य में प्रवेश कर देता है। शिष्य को केवल गुरु से बेलौस मोहब्बत होनी चाहिए। या यों कहिए कि शिष्य अपने तनम न धन के सेवा से अपने गुरु के हृदय में जगह कर ले। बस सब कुछ मिल गया। गुरु अपनी दिव्य आत्म शक्ति से शिष्य के आत्मा की चढ़ाई कराके उस सच्चे प्रेम का, उस आत्म प्रकाश का दर्शन करा देता है। जिसने एक बार उस सत्य रूप का दर्शन कर लिया, उसे फिर चैन नहीं मिलता। देर या सबेर वह फिर जा नहीं सकता। यदि माया उसको भटका भी देती है तो भी कुछ दिन पश्चात वह लौट आता है। इसका कारण यह है कि उस आनन्द और उस शान्ति की प्राप्ति उसे कहीं नहीं होती है। कहने का अर्थ यह है कि यदि समर्थ सद्गुरु प्रसन्न हो जाये तो एक दिन में ही शिष्य क्या से क्या हो जाये। ऐसी शान है इस सिलसिले के बुजुर्गों की। वे दुःख सुख से परे होते हैं परन्तु दयावश वे अपने प्रेमियों के संस्कार अपने ऊपर झेलते हैं। वही प्रेम जब असली भण्डार और गुरुजनों के और से प्रेमी के दिल और दिमाग में आता है तो इसी को ''फैज'' कहते हैं। जब प्रेमी या शिष्य अपने गुरुजनों को प्रेम से याद करता है तो उनके प्रेम की अमृतधार बरसने लगी है और उस अमृतधार की वर्षा में प्रेमी का सब कलुष धुल जाता है। परदे फट जाते हैं और दिल साफ हो जाता है। ईश्वर प्रेम का साफ अक्स उस पर पड़ने लगता है। इसके विपरीत कई लोग ऐसे भी हैं जो उस वक्त गाफिल हैं अर्थात गुरुदेव का चिन्तन नहीं करते हैं तब भी अचानक एक अजीब कैफियत हो जाती है एक दम एक ही क्षण में हालत बदल जाती है, दिल प्रेमावेश से भर जाता है। एक जज्ब सा

तारी हो जाता है। यह उसी समय होता है जब कभी समर्थ सद्‌गुरु किसी शिष्य को प्रेम के आवेश में आकर फैजयाब करते हैं। ऐसा अक्सर मुराद के साथ होता है। मुराद के लिए स्वयं गुरु के दिल में तड़प रहती है। वह सब कुछ प्रेम के वशीभूत होकर प्रेमी को दे देता है। इसमें रियाजत की उतनी जरूरत नहीं। गुरु स्वयं उसके लिए साधन करता है। पूज्य ताऊ जी पूज्य लालाजी के मुराद मुबारिक थे इस कारण पूज्य लालाजी स्वयं उनसे अटूट प्रेम करते थे।

कुछ दिनों पश्चात् पूज्य ताऊ जी महाराज ने पूज्यपाद लालाजी से फिर साधन बताने का निवेदन किया। इस पर पूज्य लालाजी ने उन्हें अपने सामने बैठाकर कहा कि ''आँखें बन्द कर लो'' पूज्य ताऊ जी के निजी शब्दों में ही उसका वर्णन करने से पाठक उसका अनुभव अच्छी तरह से कर सकेंगे।

''आँखें बन्द करते ही ऐसा मालूम हुआ कि मैं शरीर के बन्धन से बिल्कुल आजाद हूँ। हवा में उड़ता हुआ ऊपर जा रहा हूँ। मैं बड़े ही आनन्द का अनुभव कर रहा था, अजीब मस्ती थी, तन–बदन का होश न था। मुझको नहीं मालूम कि मैं कितनी देर इसी तरह बैठा रहा। होश तब आया जब लालाजी महाराज ने फर्माया कि ''आँखें खोल दो।'' मुझको होश आ गया और जमीन पर आ गिरा। लेकिन न मुँह से बोला जाता था न कानों से सुनाई पड़ता था और न आँखों से साफ–साफ दिखाई ही पड़ता था। मैंने हाथ के इशारे से बतलाया कि मुझसे बोला नहीं जा रहा है। थोड़ी देर पश्चात् हालत ठीक हो गयी और मैंने अपना हाल निवेदन किया। आपने कहा ''हालत अच्छी है। मुबारिक हो। दूसरे दिन आपने फिर सामने बैठने को कहा और कहा कि ''आने दिन में जो सूरत सबसे अच्छी लगती हो, उसका ध्यान करो।'' मैं अपने एक दोस्त का ध्यान करने लगा और उसी में मुझे बड़ा ही आनन्द प्राप्त हुआ। जब जिसका मैं ध्यान करता था उस शक्ल का लोप होने लगा और उसके स्थान पर दिल के पास घड़ी की टिक–टिक सी आवाज सुनाई देने लगी। उन्होंने कहा कि इस शब्द को ॐ का शब्द समझकर ध्यान करो और बराबर सुनते रहो। एक लमहा भी याद से खाली न होने पासे।'' मैं इस शब्द का अभ्यास कई वर्षों तक करता रहा, तत्पश्चात् यह शब्द जिस्म के रोम–रोम में सुनाई देने लगा। आपने कहा कि यह सुल्तान अजकार यानी जिक्रों का बादशाह है। इसके बाद जज्ब दिन पर दिन बढ़ता रहा। एक दिन आप किसी को कुछ समझा रहे थे। मैं आपके पीछे बैठा हुआ था। जज्ब तारी था। आँखों से आँसू जारी थे। आपने कहा ''यही अव्वल (आदि) और यही

आखिर (अन्त) है।'' इसके बाद फिर आध्यात्म विद्या की शिक्षा के बारे में नहीं कहा।''

पूज्यपाद लालाजी ने एक बार पूज्य ताऊ जी से पूछा कि ''मैं तुम्हें गायबाना तालीम देता रहता हूँ क्या तुमने कुछ महसूस किया है?'' उन्होंने निवेदन किया कि ''सोने की दशा में या सन्ध्या करते समय में यह देखता हूँ कि आप कुछ कह रहे हैं और मैं सुन रहा हूँ, परन्तु क्या कह रहे हैं यह याद नहीं रहता है।'' पूज्यपाद लालाजी ने कहा ''यही तालीम है जो मैंने तुम्हें दी है। अगर तुम कोशिश करोगे तो वह खुलेगी जिससे औरों को भी फायदा होगा। अगर मेहनत नहीं करोगे तो यह दबी पड़ी रहेगी लेकिन तालीम तुम तक पहुँच गयी है।''

कैसी अनोखी रीति है, प्रेमी को पता भी नहीं चला और यह अमूल्य निधि उसके पास पहुँच गयी जिसके लिए ''जनम –जनम मुनि जतन कराहीं'' वह राम नाम, प्रभु का नाम, ओंकार का नाम उस धनी दीन दयाल ने प्रेम के वशीभूत होकर अपने प्रिय को दे डाला, लुटा दिया। इस सिलसिले की यही बरकत है। यही विशेषता पूज्य ताऊ जी में प्रधान रूप से थी। जो कोई भी उनके सम्पर्क में आया वह बदल गया। ऐसे–ऐसे लोग जिन्होंनें परमार्थ तो दूर की बात, ईश्वर का नाम भी मुँह से कभी न लिया था वे भी ताऊ जी के संसर्ग में आकर इस प्रकार बदल गये जैसे काया कल्प हो गया हो। यह प्रत्यक्ष चमत्कार स्वयं लेखक ने भी अनुभव किया है। कितने ही ऐसे लोग जो दीन तो छोड़ दुनिया की दृष्टि में भी बदइखलाकी के स्वरूप थे उनको इस महान आत्मा ने अपने चरणों में शरण दी और उनका चरित्र स्वयं ही बदलता और बनता चला गया। पूज्य ताऊ जी में ऐसी अद्भुत आकर्षण शक्ति थी कि लोग खुद–बखुद खिंच के आ जाते थे। उन्होंने कभी किसी को यह नहीं कहा कि मांस न खाओ, कभी किसी भी बात के लिए किसी को मना नहीं किया। वाह्य रूप से आप किसी भी बात की हिदायत किसी को नहीं करते थे, पर धन्य थे वे महापुरुष कि जिनके सम्पर्क में आने पर खुद–ब–खुद लोगों की बुराइयाँ खत्म हो जाती थीं। जिस प्रकार धूप में बैठने पर गर्मी और बर्फ से ठंडक महसूस होती है ठीक उसी प्रकार उन महापुरुष के दर पर ही शान्ति बरसती थी। शान्ति, सद्भाव प्रेम, सद्चरित्रता एवं ईष्वरीय गुण वहाँ की जीमीं आसमाँ वहाँ के वातावरण में ही भरा रहता था। वे दिव्य पुरुष जहाँ विराजते वहाँ के जड़ वस्तु पर इतना प्रीााव था तो चेतन का क्या कहना वो इस असर से कैसे बेअसर रह सकता है।वह दिव्य सूर्य प्रेम से ही सारे दुर्गुणों का शोषण कर लेते एवं सम्पर्क में आने वाले का चरित्र स्वयं ही ठीक हो जाता था। सन्तों के गुण लिखे नहीं जा सकते, कहे नहीं जा सकते

वरन् उस गूँगे के स्वाद की भाँति है जो स्वाद अनुभव तो करता है परन्तु कह नहीं सकता है। उसके लिए अनुभूति ही जीवन का आनन्द है। जिस व्यक्ति को गुरु प्रेम मिलता है, उसका अनुभव वह व्यक्ति विशेष ही कर सकता है, शब्दों में उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है।

आध्यात्म विद्या की पूर्णताः

"The Sun requires no torch to make him visible" Those who come to seek truth with flaming Spirit of Love and Veneration to them the Lord of Truth reveals the most wonderful things regarding Truth, Goodness and Beauty.

जिस प्रकार गंगा निरत बहती रहती है और पहाड़ों, जंगलों, ऊबड़ खाबड़ मैदानों आदि से होकर गुजरती हुई अन्त में अपने प्रियतम समुद्र में लय होकर शान्त और शाश्वत हो जाती है। वह उस बहाव में यह भी नहीं देखती है कि लोग उसमें स्नान कर रहे अथवा कपड़े व मल मूत्र धो रहे हैं उसको इसका कुछ ध्या नही नहीं। उसे तो बस एक ही ध्यान है, एक ही आदर्श है और वह आदर्श है अपने प्रियतम के मिलन की। मिलकर प्रियतम में ही लय हो जाना। ठीक उसी प्रकार सन्त या प्रेमी भी जब एक सूं होकर केवल एक आदर्श, एक ध्येय लेकर अपने गुरु में लय हो जाता है तो उसको पूर्णता हासिल हो जाती है। पूज्य ताऊ जी महाराज ने अपने आपको अपने गुरुदेव में लय करके अध्यात्म विद्या की पूर्णता को हासिल कर लिया और पूर्ण हो गये।

इसको पहले कई बार कहा जा चुका है कि यह रास्ता प्रेम का है। प्रेम एवं भक्ति के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं। पितृ भाव सखाभाव, बन्धुभाव या गुरुभाव किसी भी प्रकार का भाव हो, परन्तु निश्छल प्रेम की ही आवश्यकता है। हमारे सत्संग में पिता–पुत्र भाव की ही प्रधानता रही है। अपने पितृ तुल्य ताऊ जी को कभी भूलकर भी इस गुरु दृष्टि से नहीं देख सके। वे हमें सदा पिता ही दिखाई दिए। वही पितृ तुल्य व्यवहार उनका भी सदैव हम लोगों के साथ रहा। पिता–पुत्र में कोई भेद नहीं, पिता पुत्र के अपराधों को देख नहीं सकता। वह सदा पुत्र का हितैषी रहता है। जिस प्रकार पिता का सर्वस्य पुत्र के लिए होता है, वह अपना अर्जित अमूल्य निधि भी पुत्र को स्नेह एवं सहर्ष प्रदान कर देता है, ठीक उसी प्रकार पूज्य ताऊ जी ने जो कुछ अध्यात्म विद्या की सम्पत्ति अपने गुरुदेव एवं अपने तप से अर्जित किया वह सब को गुप्त रूप से दे डाला।

''सद्गुरु हमसे रीझ के, एक कहा प्रसंग।
वर्षा बादल प्रेम का, भीग गया सब अंग।।

भेदी लीन्हा साथ कर, दीन्हीं वस्तु लखाय।
कोटि जनम का पन्थ था, पल में पहुँचा जाय।।

इस प्रकार सन् 1914 में अपने रहवर से मिलने के पश्चात् 16 वर्ष निरन्तर प्रेम प्रवाह में बहते रहे। सन् 1930 के सालाना जसले में जो प्रतिवर्ष ईस्टर की छुट्टी में होता है, आचार्य प्रवर पूज्यपाद लालाजी महाराज ने पूज्य ताऊ जी महाराज से जलसे को तवज्जह (आध्यात्म विद्या का आन्तरिक अभ्यास) दिलवाई। उसी वर्ष उन्हें इजाजत ताअम्मा देकर आज्ञा दी कि ''तुम मेरे मिशन को फैलाओ, भूले भटकों को रास्ता दिखलाओ। यदि तुम मेरा काम करोगे तो दीन और दुनियाँ दोनों में सुर्खरू हो जाओगे।'' यह इजाजत गुरु अपने विशेष शिष्य को ही देता है। जो मौजूदा जन्म में अपने पिछले जन्म की किसी कमी को पूरा करने आते हैं और गुरु कृपा से उसको पूरा करके अपने गुरु के मिशन को फैलाते हैं।सन् 1930 में ही पूज्य ताऊ जी को इस विशेष आदरणीय इजाजत से विभूषित किया गया था। आपने अपने गुरुदेव के जीवनकाल में कोई भी शिष्य नहीं बनाया तथा अपने गुरु प्रेम एवं सेवा में ही रत रहे। 14 अगस्त 1931 को जब महात्मा पूज्यपाद लालाजी ने अपने पार्थिव शरीर का त्याग किया और अपने असल भण्डार में लीन हो गये। उनके निर्वाण के पश्चात् ही पूज्यपाद ताऊ जी ने अपने गुरुदेव का काम शुरू किया औार जीवन के अन्त समय तक करते रहे।

पूज्य ताऊ जी की शिक्षा

इससे पहले कि मैं पाठकों के समक्ष पूज्यपाद ताऊ जी के अध्यात्म शिक्षा के बारे में लिखूँ मै। अपना यह कर्तव्य समझता हूँ कि मैं इस सिलसिले के बारे में, जो कुछ सूक्ष्म ज्ञान रखता हूँ उससे अवगत करा दूँ, जिससे पाठकगण को उनकी शिक्षाओं को स्पष्ट, सुचारु एवं सम्पूर्णता से समझने में सहायता मिलेगी। मनुष्य इस संसार में क्यों आता है, यह प्रश्न बड़ा ही स्वाभाविक लगता है। बच्चा जब जन्म लेता है, उस समय वह अपने पूर्व जन्म के संस्कारों के अनुरूप ही स्वरूप लेकर आता है। जन्म के समय आत्मा के ऊपर केवल पूर्व जन्म के संस्कारों का ही आवरण रहता है परन्तु जन्म के पश्चात बच्चे पर माता–पिता एवं घर के वातावरण का प्रभाव पड़ने लगता है और वह धीरे–धीरे अन्य संस्कारों से जकड़ जाता है। आत्मा के ऊपर

तरह'–तरह के आवरण छा जाते हैं जिससे वह दब सी जाती है और मन निरंकुश सा हो जाता है। यद्यपि जीवनदाता वह आत्मा ही है। इस प्रकार संसार में मनुष्य अपने संस्कारों के फलस्वरूप ही आता है। वह सृष्टि संस्कारों के वशीभूत ही चलायमान है। यदि ऐसा न होता तो कोई गरीब और अमीर कोई दयालु कोई निर्दयी नहीं होता। मनुष्य अपने कर्मों के फलस्वरूप अपने ही विचारों एवे कार्यों द्वारा बनाये हुए संस्कारों में जन्म लेता है। यदि किसी ने अच्छे या धार्मिक कार्य किए हैं तो उसे वह दयालु, न्यायकारी, धनी, सुख सम्पत्ति से परिपूर्ण जन्म देता है यदि इसके विपरीत कार्य है तो निर्धन, दुःख तथा तरह–तरह के कष्ट लेकर जन्म लेता है।

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा। जो जस कीन्ह सो तस फल चाखा।।

यदि किसी ने उस जन्म में परिमार्थ कमाया है तो प्रभु अपनी दया से उसको वैसा वातावरण देता है जिससे वह अपना पिछला कार्य पूरा कर सके। ईश्वर को अपने बच्चों से प्रेम है। वह परमपिता परमात्मा सबको अपने अंक में लेना चाहता है। इसी से भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है "हे अर्जुन जो एक कदम भी मेरी ओर उन्मुख होता है, मैं उसके लिए हजार कदम चल कर आता हूँ।" आत्मा तो परमात्मा का ही अंश है और अंश को अपने अंशी से स्वाभाविक प्रेम होता है। आत्मा सदैव ही ईश्वरोन्मुख रहती है परन्तु मन अपने संस्कार वश नीचे की दुनियाँ में खींचता है। मन तो भोगों का रसिया है। उसे तो भोगों में ही रस मिलता है। इसी कारण वह एक बड़े बाँध की तरह आत्मा परमात्मा के मिलन में बाधा डालता है। संस्कारों से शक्ति पाकर और आत्मा से जीवन लेकर वह इतना शक्तिशाली है कि शायद उसकी शक्ति संसार के किसी भी पदार्थ में नहीं है। आत्मा शुद्ध है परमात्मा की प्रेमी है परन्तु मन ही वह सीढ़ी है जिसपर चढ़कर आत्मा अपने उस प्रियतम से जो सूली ऊपर या गगन के ऊपर है, दर्शन कर सकती है। इसी को मीरा जी ने लिखा हैः–

सूली ऊपर सेज पिया की, किस विधि मिलणां होय।।

यदि मन सध जाय तो परमात्मा से मिलना कोई दुष्कर कार्य नहीं है। परन्तु मन का सधना ही दुष्कर है, जिसे बिना सद्गुरु के साधना कठिन ही नहीं असम्भव है।

ऐसा ही एक प्रश्न यह भी प्रायः उठा करता है कि गुरु की क्या आवश्यकता है। क्या हम स्वयं नहीं ईश्वर की पूजा कर सकते। इसका उत्तर बड़ा ही सरल है। हम संसार में देखते हैं कि बच्चा जब जन्म लेता है उसी दिन से गुरु की आवश्यकता पड़ जाती है। गुरु का शाब्दिक अर्थ रास्ता

दिखाने वाला है। जन्म लेने के बाद माँ बच्चे को दूध पीना, बोलना, खाना, उठना, बैठना, खड़ा होना, चलना सब सिखाती है, अतः माँ बच्चे की प्रारम्भिक गुरु है। वही बच्चे को संसार में जीवित रहने का रास्ता दिखाती है। इसी से माँ के प्रति बच्चे का सबसे पहले प्रेम होता है। कहते हैं जन्म लेने के एक माह पश्चात् ही बच्चा माँ को पहचानने लगता है। दूसरा गुरु पिता होता है जो उसे अन्य सांसारिक कार्यों के सम्पादन करने की रीति बताता है। माँ–बाप के पश्चात् वह घर के दायरे से हटकर स्कूल कालिज आदि के क्षेत्र में जाता है, वहाँ गुरु उसको तमाम सांसारिक विषयों, शैक्षिक योग्यता एवं डिग्री आदि लेने के योग्य बनाना है। यह उसका तीसरा गुरु हुआ। परन्तु छात्र को इस योग्य बनाने के पूर्व यह अत्यन्त आवश्यक है कि शिक्षक को स्वयं उस विषय का ज्ञान अच्छी प्रकार से कर ले। विषय का जितना गहन ज्ञान शिक्षक को होगा उतना ही वह ज्ञान शिष्य को भलीभाँति दे पायेगा। छात्र जीवन के पश्चात् व्यावसायिक क्षेत्र में भी गुरु की आवश्यकता होती है। वह उसका चौथा गुरु होता है। इस प्रकार क्रमशः उसी बच्चे का ज्ञान का दायरा बढ़ता चला जाता है। माँ से बाप फिर शैक्षिक गुरु एवं व्यावसायिक गुरु! व्यावसायिक शिक्षा का लक्ष्य होता है धनोपार्जन। अब बच्चे को गुरु की आवश्यकता नहीं रह जाती क्योंकि वह धनोपार्जन योग्य हो गया। जो उसकी इस शिक्षा का लक्ष्य था और उस लक्ष्य की प्राप्ति हो गयी। लक्ष्य की प्राप्ति के पश्चात् सभी गुरु क्रमशः माँ बाप शिक्षा एवं व्यावसायिक गुरुसब पीछे रह जाते हैं, ठीक इसी प्रकार परमार्थ के रास्ते पर चलना सिखाने के लिए, एवं परमपिता का साक्षात्मार कराने के लिए भी सद्गुरु की आवश्यकता होती है। परमार्थ के रास्ते पर चलने के लिए गुरु की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, ऐसासोच लेना बडत्रे ही भ्रम की बात होगी। जब सांसारिक किताबों के लिए इतने परिश्रम की आवश्यकता होती है तो उस कमाई के लिए जो असीमित है और परमात्मा का ज्ञान कराने वाली है, उसमें गुरु के बगैर और परिश्रम के बगैर कैसे चला जा सकता है। कहने का अर्थ है कि परमार्थ के पथ पर बगैर गुरु के नहीं चला जा सकता है। गुरु ही तो उस रास्ते को दिखाने वाला प्रकाश स्तम्भ है। गुरु वही होता है जिसने आत्मा का साक्षात्कार कर लिया है। आत्मा का साक्षात्कार करके परमात्मा के दर्शन का आनन्द करना ही लख्य है। यही पूजा है। भजन, सुमिरन, ध्यान यह सब मन को साधने के साधन हैं। गुरु अपने इच्छा शक्ति के द्वारा अभ्यासी को उसके आत्मा का साक्षात्कार करा देता है परन्तु यह साधक की अपनी हालत नहीं गुरु द्वारा बख्शी हुई हालत होती है। उन्होंने दया करके साधक को उस परमात्मा का भेद खोल कर दिखा दिया परन्तु साधक जब स्वयं साधना करके उस स्थान

को प्राप्त कर लेता है तो वह हालत स्थायी हो जाती है। जैसे एक विद्यार्थी को शिक्षक कोई पाठ अध्ययन करा देता है तो उसे थोड़ा बहुत याद रहता है परन्तु जब वह घर जाकर उसका मनन करता है तो उसे पूर्णतया याद हो जाता है। इसके पश्चात् गुरु पीदे हट जाते हैं। जिसको एक बार समर्थ सद्‌गुरु दीक्षा करके आत्मा का साक्षात्कार करा देता है और ख्याली तौर पर आनन्द का अनुभव जो साधक कर लेता है, उसके लिए वह सदा बेचैनी का अनुभव करता है। यदि दुर्भाग्यवश वह दुनियाँ में फँस भी गया तो दयालु गुरुदेव या उसे उबार लेते हैं या सचेत कर देते हैं। यदि वह तब भी सचेत नहीं होता और दुनियाँ में फँस जाता है तो दुःख या कष्ट या ठोकर लगने पर आत्म साक्षात्कार के आनन्द की याद उसे आ जाती है और तब वह उसके लिए तड़पता है एवं संसार में ठुकराये जाने पर पुनः उस प्रियतम की ओर मुड़ पड़ता है।

जिस प्रकार कोई मनुष्य अपना घर छोड़कर कहीं और विदेश में चला जाता है और बहुत बड़े महल का प्रलोभन पाकर वहाँ रहने लगता है। यह संभव है कि उसको इस विशेष प्रलोभन के कारण उस घर की याद न आती हो जो कि उसका अपना एवं वास्तविक घर था, बरस, दो बरस, दस बरस जब तक उस महल में रहता है अपने घर की याद नहीं आती। महल का असली मालिक आ गया उसने उनको निकाल दिया। टूट फूट का सब हिसाब गांगा झूठा महल छिन गया क्योंकि वह उसका नहीं था बेघरबार हो गये। ऐसी स्थिति में उसे पुनः वह अपना घर याद आ जायेगा जो शाश्वत उसका था, जहाँ से वह कभी नहीं निकाला जायेगा जो शाश्वत उसका था, जहाँ से वह कभी नहीं निकाला जायेगा जहॉ की दीवारे सदा उसकी राह देखती है इश्क यही दशा उस साधक की होती है जिसने आत्मा का साक्षात्कार कर लिया है वह भटक तो सकता है परन्तु कभी न कभी अवश्य चेतेगा। इस प्रकार परमार्थ पथ पर पंथाई के लिए गुरु की नितान्त आवश्यकता होती है।

इसी प्रश्न के साथ एक प्रश्न यह जुड़ जाता है कि जब गुरु की आवश्यकता इस राह पर चलने के लिए इतनी है तब यह पहचान कैसे की जाये कि सच्चा गुरु कौन है और किससे आत्मबोध की शिक्षा ली जाये। साधक जो स्वयं इस विद्या से अनभिज्ञ और अनजान है वह कैसे निश्चय करे कि वह गुरु श्रेष्ठ एवं उसे परमपद तक पहुँचाने के योग्य है। सांसारिक गुरू करने में तो डिग्री देख ली जाती है, परन्तु परमार्थी गुरु को जो वास्तव में आत्म साक्षात्कार कर चुका हो उसको प्राप्त करना एवं पहचानना बहुत ही कठिन ही नहीं वरन बड़ा ही दुष्कर है। भाग्यशाली हैं वे लोग जिन्हें परमपिता

परमेश्वर की दया से ऐसे सद्गुरु मिले हैं उनका तो बेड़ा पार ही समझो। परन्तु सद्गुरु की पहचान आज के युग में बड़ा ही कठिन है क्योंकि लोगों ने इसको पेशा तथा धन अर्जन का साधन बना लिया है। कोई विद्वान हो सकता है। लम्बे चौड़े भाषण दे सकता है उसके समर्थक भी हो सकते हैं। लोगों की संख्या, सत्संग भवन, कपड़े वेश, भूषा हो सकती है परन्तु यह सब सद्गुरू के चिन्ह नहीं। सद्गुरू के लिए यह आवश्यक नहीं है उसे बड़े बड़े श्लोक रटे हों, वेद रहे हों वास्तव में सद्गुरू तो वही है जिसने आत्मा का साक्षात्कार करके परमात्मा को पा लिया हो। ऐसे सद्गुरू बाहरी नाटक चाटक सिद्धियों और झूठे प्रशंसा के भूखे नहीं होते। सच्चे सद्गुरु को सबसे प्रेम होता है, उन्हें सबमें ईश्वर का दर्शन होता है केवल मनुष्यों में ही नहीं वे चराचर के समस्त जीवों में, जड़ चेतन में अपने प्रियतम प्रभू का रूप देखते हैं। ऐसे सद्गुरू की पहचान तीन बातों से मुख्य रूप से होती है।

(1) जब हम किसी सच्चे सद्गुरू के समक्ष बैठते हैं तो अशान्त मन शान्त हो जाता है। अधिकतर अशान्त मन ही गुरू की तलाश करता है। सद्गुरू के मिलने पर उसे अवश्य ही शान्ति का अनुभव होता है।
(2) जब किसी सदगुरू की सोहबत में कोई आता है तो जितनी दे रवह उसके सम्पर्क में रहता है, दुनियाँ के ख्यालात हटे रहते हैं और परमात्मा की ही याद आती है। यह एक बड़ी ही अच्छी पहचान है।
(3) जब कोई सद्गुरु के सम्पर्क में कुछ दिन रहता है तो धीरे–धीरे स्वयं ही उसका चरित्र सुधरता चला जाता है और बिना प्रयास ही वह शनैः शनैः परमार्थ की राह पर अग्रसर होने लगता है, उस सद्गुरू के असर से बेअसर कोई रह ही नहीं सकता है।

समर्थ सद्गुरु की एक और ही पहचान है जिसका अनुभव हर साधक करता है। उनमें एक अजीब आकर्षण होता है। तबियत चाहे कि उनके पास रहें, जी ललचे कि वह बोले कुछ सेवा का अवसर मिले। बिना कारण उनको देखने का मन करे यह भी सद्गुरु की एक पहचान है जिनको सौभाग्य से पूज्य ताऊ जी को देखने का अवसर मिला होगा। वह जानते होंगे कैसा अजीब आकर्षण था उन महापुरुष में। जिससे बोलते वही उस बोली को भुला न पाता। जिसको प्रेम से देख लिया वह उस प्रेम को भूल न पाया। हर सत्संगी सेवा का अवसर ही देखता रहता कि कब मिले वह अवसर जब उनकी कुछ सेवा कर सकें। समर्थ सद्गुरु न धन की सेवा न इज्जत का भूखा होता है, वह चाहता है कि निःस्वार्थ प्रेम और निःस्वार्थ प्रेम के हाथों बिक जाते हैं। उन्हें तो टूटने वाला हृदय चाहिए।

यह कई बार कहा जा चुका है कि यह सिलसिला प्रेम और समर्पण का है। हमारा सिलसिला सूफियों तथा वेदान्तियों के समिश्रण का है, जिसको हमारे बुजुर्गों ने ''सन्तमत'' का नाम दिया है। यह कहना नितान्त आवश्यक है कि यह सूफियों की ही देन है। सूफी सन्तों ने विशेश रूप से आन्तरिक साधना को ही ध्येय बनाया था। यह विद्या हिन्दुओं में उपनिषद काल में थी परन्तु इसका प्रचार व्यापक रूप से न हो सका था। यदि हो भी गया हो तो हिन्दुओं में यह विद्या करीब –करीब लुप्त हो गई थी। हिन्दू यथार्थ या असलियत से दूर होते जा रहे थे जैसा कि ईश्वरीय नियम है कि जब प्रभु किसी देश और जाति को गुमराह औार अधः पतन की ओर जाते रेखते हैं तो उसकी रक्षा के लिए दयालदेश से कोई ऐसी महान आत्मा को असीमित शक्ति देकर भेजते हैं, जो आकर अपनी आध्यात्म शक्ति के द्वारा उनका उद्धारकर्ता बनता है और काल देश के अनुसार उन जाति विशेष को सत्यपथ पर लाकर खड़ा कर देते हैं। इसी प्रकार हिन्दुओं में जब असल विद्या का पतन हुआ तभी वख्त के पूरे सूफी सन्त शिरोमणि अहमद अली साहब ने अपने गुरुमुख शिष्य हजरत फजल अहमद साहब को यह भविष्यवाणी की कि तुम्हारे पास एक हिन्दू लड़का आयगा और उसके द्वारा यह विद्या हिन्दुओं में फैलेगी। उनकी भविष्यवाणी समय आने पर पूर्ण सत्य सिद्ध हुई जब मौलाना फज्ल अहमद साहब ने पूज्यपाद लालाजी महाराज एवं पूज्यनीया चाचा जी महाराज (श्री रघुवर दयाल जी)को बिना धर्म जाति की परवाह करके सब आध्यात्म विद्या का भण्डार सौंप दिया। देखा जाता है कि मुसलमानों में ताअस्सुब बहुत होता है और पूज्य फज्ल अहमद साहब की भी बहुत से मुसलमान सन्तों ने बस बात की निन्दा की परन्तु उन्होंने इसकी कोई परवाह नहीं की और जाति बन्धन से उपराम होकर सब अध्यात्म पूँजी पूजयपाद लालाजी एवं चाचा जी को बख्श दी। इसके पश्चात इस विद्या का प्रचार हिन्दुओं में व्यापक रूप से हुआ।

सूफी सन्तों का सिलसिला 4 भागों में विभक्त है–

(1) कादरिया। (2) चिश्तिया।
(3) सोहार वर्दिया। (4) नक्शबन्दिया।

हमारे सिलसिले की निस्बत नक्श बन्दिया खानदान की है। क्योंकि यह सिलसिला मुसलमान सूफी सन्तों का है। इस प्रकार हमारे 34 बुजुर्ग केवल मुसलमान ही थे। इस सिलसिले की निस्बत इतनी जबरदस्त है कि वंश के महापुरुषों से प्रेमी बहुत फैजयाब होता है,यदि उसकी कड़ी टूटी न हो। यहाँ निस्बत का अर्थ बतला देना चाहता हूँ। निस्बत का अर्थ है कड़ी। यानी एक

बुजुर्ग के पश्चात् दूसरे को अपने गुरु में लय होना कड़ी कहलाता है। इस तरह होने पर जो हालात इस वंश के पूर्वजों पर गुजरी, वह सब पर गुजरेगी। निस्बत को आप यों समझिये जैसे विद्युत तार आपस में गुँथे रहते हैं और एक बटन दबाने से जल जाते हैं वही दशा निस्बत की होती है। यदि निस्बत में शिकस्त नहीं है अर्थात निस्बत टूटी नहीं है तो बुजुर्गान सिलसिले अर्थात वंश के सन्त महापुरुष गायबाना और कभी–कभी जाहिरी तौर पर सदैव ही रक्षा एवं हिदायतें करते रहते हैं। प्रेमी अर्थात् साधक की बेहतरी इसी में है कि वह (वंश के महापुरुषों) पीराने उज्जाम की मोहब्बत को अपने दिल में रोज ब रोज ज्यादा करता जाये। इस कदर ज्यादा कि वह सब सांसारिक कार्यों को करते हुए भी उनका ध्यान हर समय रक्खे।

सूफी मत सिद्धांतः–

सूफी मत सिद्धांत चक्रविद्या पर ही आधारित है। इसके अनुसार मनुष्य के पिंड या नर देह में सिर की चोटी के पास मष्तिष्क के भीतर दो ग्रन्थियाँ हैं जिन्हें सेरीबेलम और सेरीब्रम कहते हैं। सेरीब्रम का ही नाम शिरोब्रम है। इन्हीं दोनों ग्रन्थियों के बीच में एक छोटा सा रिक्त स्थान है जिसे स्वर्णमय कोश कहते हैं। इस स्थान पर एक गाढ़ा सा स्वर्ण रंग का पानी सा है इसी को ब्रह्मरन्ध या ब्रह्मकोश कहते हैं। इसी ब्रह्मरन्ध में आत्मा का वास होता है।आत्मा जो कि उस परमपिता परमात्मा का अंश है, इस आत्मा रूपी सूर्य की धार पूरे शरीर के विभिन्न स्थानों या मुकामों से, शरीर के शिराओं व रक्त के दबाव द्वारा होती हुई जाकर गुदाचक्र पर स्थित हो जाती है। सिर की चोटी के स्थान से आत्मा का प्रवेश होने के कारण ही हिन्दुओं में चोटी रखने का और मुसलमानों में गोलाकार उस्तरा फिरवाने की प्रथा है। इसकी धार्मिक धारणा यही है। मनुष्य के मृत्यु के पश्चात भी कपाल क्रिया सिर के उसी भाग में करने का यथार्थ अर्थ यही है।जिस प्रकार यह संसार सत्–रज–तम से युक्त है, ठीक उसी प्रकार यह नर शरीर भी तीन शरीर से मिलाकर बना है।

(1) स्थल शरीर (2) सूक्ष्म शरीर (3) कारण शरीर।

इन तीनों के भी छः छः उपभाग हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर 18 भाग हैं। सूफियों या संत मत के अनुसार नर देह में आत्मा आज्ञा चक्र पर जो दोनों भौहों के बीच में है, वहाँ बैठकर सारे नर शरीर का पालन पोषण करती है। इसी स्थान को ईद का चाँद या शिवनेत्र भी कहते हैं। मुसलमानों में 'नुक्तये सवेदा' भी कहते हैं। साधक को अपनी आत्मा की धार उलट करपुनः उसी स्थान में पहुँचना ही साधना है। यही आत्मा की चढ़ाई है तथा इसी को

साधना चतुष्टय भी कहते हैं। यह शरीर जन्म–जन्म के संस्कारों से जकड़ा है जिसे गुरुकृपा ही काटती है। जब उन गुत्थियों की गाँठ काट दिया जाता है तब वह शनैःशनैः ढीली प़ड़ जाती है और चढ़ाई आरम्भ हो जाती है। पूज्य ताऊ जी महाराज के पास जब कोई जिज्ञासु आता और वह प्रेम से पूर्ण होता तो वे उसके जन्मों के संस्कार काट कर जिज्ञासु को अपनी आत्मशक्ति से ऊपर तक की चढ़ाई कराकर, उसको आत्मा का साक्षात्कार करा देते थे परन्तु यह गुरु की देर थी इसके पश्चात् सधक जब स्वयं उसकी चढ़ाई करता तब उसको सब अनुभव स्पष्ट रूप से होते जाते और उस परमानन्द के पश्चात् उसे सारी दुनियाँ ठीकरे की भाँति लगती, यही उसकी शिक्षा थी। जिस प्रकार कोई गुणी अपने गुण को भिन्न–भिन्न पात्र को उसकी पात्रता के अनुसार ही बताते हैं, उसी प्रकार वे पूर्ण संत साधक की स्थिति का ज्ञान करके उसको उसके अनुरूप ही साधन बताते थे। आमतौर पर जिसमें प्रेम का माद्दा अधिक देखते, उसे हृदय चक्र के मुकाम पर ऊँ शब्द का या जो शब्द साधक को प्रिय हो, जैसे राम–कृष्ण आदि का जाप बताते और कभी–कभी किसी–किसी को आज्ञाचक्र के स्थान पर प्रकाश का ध्यान करने को भी बताते। कुछ दो चार लोगों को छोड़कर अपनी शक्ल का ध्यान किसी को नहीं बताते थे।

वे कहते थे ईश्वर एक है, उसके नाम अलग–अलग हैं जिसको जो नाम अच्छा लगे, उसे को भजें। चाहे वह श्रीराम का हो या श्रीकृष्ण का। चाहे रहीम हो या अल्लाह सभी एक हैं। वह परमपिता परमेश्वर एक है। एक के सिवाय दूसरा नहीं। उसके नाम अनगिनत हैं, उसके रूप की कोई सीमा नहीं। इसके अतिरिक्त भी वह आकार रहित, निर्विकार, अनामी है। जिसका न तो आदि है और न अंत। उसको जो जिस रूप से स्मरण करता है, उसके लिए वह वही रूप धारण करता है। तुलसीदास जी ने कहा है–

जाकी रही भावना जैसी। हरि मूरत देखी तिन तैसी।।

जिस प्रकार ईश्वर एक है, उसी प्रकार ईश्वर की प्राप्ति का एक ही रास्ता है। उसके अतिरिक्त दूसरा नहीं। वह रास्ता यही है कि गुरुधारण करके आत्मा का साक्षात्कार करे। इसके अतिरिक्त यकीनन कोई और रास्ता नहीं है। कर्मयोग, ज्ञान योग तथा जितने भी कर्म काण्ड आदि हैं,वह केवल मन की साधना के लिए हैं। दया, दान, सद्चरित्र आदि केवल उस पथ परचलने के लिए पथिक के साथ की रास्ते की वस्तुऐं हैं। इससे उसका रास्ता कुछ सहज हो सकता है। परन्तु प्रभु की प्राप्ति का रास्ता एक ही है और वह है प्रेम। गुरु प्रेम की कृपा द्वारा आत्मा का साक्षात्कार होता है। जब उस चिर सच्चिदानन्द स्वरूप का साक्षात्कार हो जाता है तब साधक को उस

असीमित अनन्त, अनामी, अखण्ड ईश्वर के प्रेम की एक झलक मिल जाती है और फिर वह साधक उस प्रियतम की झलक पाने को बेचैन रहता है। उसका सब कार्य सब विचार प्रभूमय हो जाता है। सह जो कहता है, वह ईश्वर की वाणी हो जाती है। वह जो चाहता है, उसकी इच्छा प्रभू की इच्छा हो जाती है। अर्थात न वह कुछ कहता है न वह कुछ करता है, संसार में रहता हुआ भी वह संसार से उपराम हो जाता है और उसके द्वारा संपादित किसी भी कार्य का कोई भी संस्कार नहीं बनता है।

जिस प्रकार ईश्वर एक है और उसकी प्राप्ति का रास्ता भी एक है। ठीक उसी प्रकार ईश्वर की प्राप्ति बिना गुरु धारण किए नही हो सकती है। घट–घट में वास करने वाले प्रभू की प्राप्ति बिना गुरु के नहीं हो सकती। गुरु के बिना प्रभू प्राप्ति तो दूर, मनुष्य मन की तरंगों को भी नहीं रोक सकता है। सद्गुरु की सहायता के बिना किसी की शक्ति नहीं जो मन के घाट बनल कर घट में प्रभू के दर्शन करा दे। इसीलिए संत कबीरदास जी ने कहा है–

गुरु को कीजे दंडवत, कोटि–कोटि प्रणाम।
कीट न जाने भृंग को, करले आप समान।।

✶

सद्गुरु की महिमा अनन्त, अनन्त किया उपकार।
लोचन अनन्त उघारिया, अनन्त लखावन हार ।।

और किसी प्रेमी ने कहा है–

आँखें हों तो देख, कलब के पर्दे में अल्लाह।
भववागर पार उतारन को, सदगुरु है मल्लाह।।

घट के अन्दर–बाहर को सम्हाल करने वाले सद्गुरु ही एक मात्र आधार है और उसकी कड़ी या सीढ़ी है सत्संग, जिससे साधक ईश्वर को प्राप्त कर सकता है।

गुरु कुम्हार शिष्य कुम्भ है, गढ़–गढ़ काढ़े खोट।
अन्तर हाथ सहार दे, बाहर मारे चोट ।।

पूज्य ताऊ जी महाराज का कथन था कि दुनियाँ को भोगो, मगर ईश्वर को चाहो। वे बहुधा कहते थे खूब कमाओ, खूब आराम करो पर उस परमात्मा की याद बनाये रक्खो। इच्छाओं को कम करने को कहते थे परन्तु यदि कोई अच्छा प्रबल हो रही हो और धर्म के विरुद्ध न हो तो उसको भोग लेने के लिए कहते थे। जिससे उसका संस्कार न बने। दुनियाँ में घर गृहस्थी

को वह बरदास्त का स्कूल कहते थे। आप बहुधा कहते थे कि जो आदमी दुनिया नहीं बना सका वह परमार्थ क्या बना पावेगा। दुनियाँ के काम भी उसी उत्साह एवं लगन से करो उसकी सफलता–असफलता में प्रभू की मरजी समझ कर राजी ब रजा रहो। यही प्रेम की पराकाष्ठा है। वह बेहतर जानता है कि क्या ठीक है क्या गलत है। जो उस प्रभू ने दिया है वही ठीक है। वह दयालु शुभ–अशुभ कर्मों के अनुसार न्याय करता है परन्तु वह कभी–कभी अपने प्रेमी के प्रबल प्रेम के वशीभूत होकर अनहोनी भी कर देता है।

अनहोनी प्रभु कर सकै, होनहार मिट जाय।

इस प्रकार दुनिया में रहो दुनिया खूब भोगो। धन संचय करो। दुनियावी सफलता के लिए उस प्रभु से चायना भी करो परन्तु धन मकान एवं किसी भी वस्तु को अपना मत समझो। दुनियाँ की प्राप्ति को ही अपना लक्ष्य मत बनाओ। तुम्हारा लक्ष्य कुछ और ही है। तुम इस संसार में किस आशय से आये हो यह सोचो और जानो। जिस प्रकार कमल जल से उत्पन्न होकर भरी जल से उपरमित रहता है, ठीक उसी प्रकार तुम रहो। संसार में रहकर, संसार के सारे कार्यों को करते हुए भी संसार में लिप्त मत हो। यह कहना जितना सरल है, करना उतना ही कठिन है। वे कहते थे कि वे लोग ईश्वर दया के विशेष पात्र हैं, जिन्हें ईश्वर कृपा से समर्थ सद्गुरु मिल गये हैं। लग लिपट कर एवं गुरु से प्रेम करके सत्पथ पर चलो। घर में रहो, नौकरी करो, बाल–बच्चों, रिश्तेदारों व माता–पिता सबकी खबर रक्खो परन्तु उनको अपना समझ कर प्रेम मत करो। उन्हें प्रभू का जानकारी प्रेम करो। यह ख्याल करो कि यह सब उस प्रभू ने तुम्हें अपनी दया से दिया है पर वह मालिक है जब चाहे वापस ले लेगा। प्रभू की अमानत है, इससे उनको पूरा प्रेम दो पर अपना न समणे। इसमें बड़ी दृढ़ संकल्प की आवश्यकता है। ठोकर लगेगी, बेदम होकर गिर पड़ोगे परहोश आने पर फिर उसी रास्ते पर चलो जिस पर ईश्वर चाहता है और प्रतिज्ञा कर लो कि–

मरेंगे यारों तलब में, हक की,
जो नाम तालिब लिखा चुके हैं।

सच्चा सुख दुनिया में नहीं है वरना धनवान, रूपवान, पुत्रवान, विद्यावान, सम्मानवान आदि सुखी होते वरन इसके विपरीत देखा यह जाता है कि सुखी कोई नहीं है। सख आत्मा के साक्षात्कार में ही है। सच्चे सुख को हासिल करने के लिए जरूरी है कि अपनी आत्मा की धार को जिस्म और मन यानी छः स्थूल और छः सूक्ष्म से हटाकर कारण के छठे चक्र पर, जो कि

असली भण्डार रूहानियत का है, पहुँचावे। तभी सच्चा सुख प्राप्त हो सकता है। यह पहुँच भी दुनियाँ में मनुष्य शरीर से ही प्राप्त हो सकता है। यह पहुँच भी दुनियाँ में मनुष्य शरीर से ही प्राप्त होती है इसलिए दुनियाँ को छोड़ कर सन्यास की कोई जरूरत नहीं है। दुनियाँ में रहकर दुनियाँ से ही वैराग्य लो यही सच्चा परमार्थ है। अवतारी पुरुषों (सन्तों) ने अपनी रहन–सहन के द्वारा यह दिखा दिया है और सिद्ध कर दिया है। कहा गया है कि दुनिया में शहद की मक्खी की तरह रहो वह फूलों का रस तो लेती है मगर न उनको बिगाड़ती है और न बदसूरत करती है। उदाहरण स्परूप भगवान श्री रामचन्द्र जी ने परिवार माता–पिता, स्त्री, भाई, राजपाट सबको धारण करते हुए अमरत्व को प्राप्त किया। वशिष्ठ जी, सभी सूफी एवं पूज्यपाद लालाजी महाराज, पूज्य चाचा जी महाराज, पूज्य ताऊ जी महाराज ये सब इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। इन्होंने गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए ईश्वर का साक्षात्कार किया। मनुष्य चोले का उद्देश्य पूरा किया तथा तमाम गृहरूपों को उस आनन्दमय प्रभु के प्रेम को प्रापत करने के लिए प्रेम की गंगा बहा दी। यह प्रेमी पर निर्भर है कि वह अपनी प्यास के हिसाब से पिये। यह अनवरत बहती प्रेम की गंगा तो सदा बहती ही रहेगी क्योंकि उसका आदि स्रोत परमात्मा असीमित एवं निस्सीम है। उस स्रोत का अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता है। प्रेम की उस गंगा का एक चुल्लू पानी पीनी के बाद वह अतृप्ति किसी और पानी को पीने से तृप्त नहीं हो सकता है। धनी अपने स्रोत से अपने अपने प्रिय को प्यासा नहीं देख सकता है परन्तु उस तक उसके तट तक पहुँच तो हो जाये फिर तो वह उस अमरत्व के सलिल से स्वयं तृप्त हो जायेगा। इस गंगा के जल के स्पर्ष मात्र से हृदय तृप्त हो जायेगा एवं तन के सारे कलुष धुल जायेंगे। इसके पान करते ही सारे संताप, दुःख, क्लेश, तड़प सब शान्त हो जायेगा। अन्तर बाहर सब शाश्वत! असली लक्ष्य ईश्वर के रूप को जानना ही है यही मनुष्य के जीवन का आदर्श। यही है साधना और यही है प्रेम।

पूज्य ताऊ जी सदैव कहते थे सच्चा प्रेम वही है जिसकी वजह न मालूम हो और जिसके बिना रहा भी न जाये। वजह न मालूम हो इसका अर्थ है निःस्वार्थ प्रेम, निश्च्छल प्रेम जिसे बेगरजाना मोहब्बत कहते हैं। जब सिवाय ईश्वर की चाह के सब चाहें दूर हो जाती हैं और वृथा अहंकार भी दूर हो जाता है तभी निःस्वार्थ प्रेम आता है। जब ऐसा प्रेम गुरु और ईश्वर से होगा तभी आनन्द की प्राप्ति हो सकती है। ऐसा प्रेम प्राप्त कर लेने के पश्चात् कुछ भी दुर्लभ नहीं है। सौभाग्यशाली हैं वे जिन्हें सद्गुरु मिल जाते हैं जिसये उन्हें आधार मिल जाता है। मन एवं बुद्धि जिस चीज को देख लेती

है, उस पर सहज विश्वास कर लेती है और जिसको सहज देख नहीं पाती, उस पर जल्दी विश्वास नहीं आता है। विश्वास प्रेम की उत्पत्ति में सहायक होता है क्योंकि ईश्वर निर्विकार है एंव स्थूल, सूक्ष्म और कारण से परे हैं। उसको देखने हेतु अन्तर दृष्टि चाहिए इसके लिए आधार स्वरूप गुरुस्थूल रूप धारण करके लोगों का कल्याण करते हैं। शरीर धारी गुरु से प्रेम करना बहुत आसान है एवं उस स्थूलधारी समर्थ गुरू से निस्बत अपने बुजुर्ग और बुजुर्ग की परमात्मा से होती है इसलिए उसमें सब वही शक्तियाँ निहित हैं जो परमात्मा में हैं। यदि समर्थ गुरु से सच्चा प्रेम हो जाये तो समझिये बेड़ा पार है।

आशिकी से मिलेगा ये जाहिद,
बन्दगी से खुदा नहीं मिलता।

पूज्य ताऊ जी का कहना था कि दूसरों की निन्दा कभी न करो। दूसरे की निन्दा करने से उसके दुर्गुण का असर सीधा तुम्हारे मन पर पड़ेगा और उससे तुममें भी वह दुर्गण आने का भय पैदा हो जाता है। वह कहते थे कि अपनी भी निन्दा मत करो क्योंकि तुम तो उस धनी के अंश हो। तुम सराहनीय हो, निन्दनीय नहीं। यदि तुममे बुराइयाँ है तो वह तुम्हारे स्वयं के कर्मों के कारण हैं, उनको सुधारो पर अपने आप की निन्दा मत करो, इससे मनोबल कम होता है। और जब तुम सारे संसार को प्रभूमय देखने का अभ्यास कर लोगे तो निन्दा का स्थान ही कहाँ रह जायेगा। जब सब उस प्रभू महान भी संतान हैं, उसके ही अंश हैं तो निन्दा का प्रश्न ही कहाँ है। इसी भाव ओतप्रोत होकर कबीरदास जी कहते हैं:–

लाली मेरे लाल की जित देखूँ तित लाल।
लाली देखने मैं गई, मैं भी हो गयी लाल।।

✵ ✵ ✵

अव्वल अल्ला नूर उपाया, कुदरत के सब बन्दे।
एक नूर से सब जग उपज्या, कौन भले कौन मन्दे।
(गुरू नानक देव जी)

सदाचार से रहने एवं हक और हलाल की कमाई पर बहुत जोर देते थे। वे कहते थे कि जो व्यक्ति हक और ईमानदारी की कमाई नहीं खाता वह परमार्थ कभी नहीं जमा सकता है। वह ईश्वर से कोसों दूर हैं क्योंकि जो जैसी कमाई खाता है, उसका वैसा ही विचार एवं मन बनता है। विचार इतना शक्तिवान है कि उस व्यक्ति के कपड़ों एवं घरों तक में व्याप्त हो जाता है, विचारों का प्रभाव धोबी के धुलने पर भी कपड़ों से नहीं जाता है। पूज्य ताऊ

जी एक घटना बतलाते थे कि हराम की कमाई से विचारों में कितनी अशुद्धता आ जाती है। ताऊ जी कहते हैं:–

"एक बार मैं और डा0 श्यामलाल सक्सेना रेल से सफर कर रहे थे, जाड़ों की शुरूआत थी। हम लोग गरम कपड़े नहीं ले गये थे। ठंढी हवा के चलने से ठंढक बढ़ गयी थी। रेल के उसी डिब्बे में सफर कर रहे एक सहयात्री ने अपना कम्बल या लिहाफ हम लोगों को दे दिया। अभी उसे ओढ़े हुए अधिक समय भी नहीं गुजरा था कि बहुत ही बुरे एवं बेहूदा ख्यालात आने लगे। शराब पीने की इच्छा करने लगी। मैं अपने ख्यालातों से इतना परेशान हुआ कि उठ कर बैठ गया और कम्बल हटा दिया, उसके हटाते ही ख्यालात बन्द हो गये। पता लगाने पर पता लगा कि वे लोग रिश्वत पसन्द एवं शराबी व्यक्ति थे।" जैसा भोजन किया जायेगा, वैसा ही खून बनेगा क्योंकि भोजन से खून और खून के प्रभाव से ही मन बनता है। पवित्र खून वाले का ही मन एवं विचार ठीक होगा। इसलिए लोग अच्छे विचार वालों को शरीफ खून है आदि विशेषण से पुकारते हैं वरना खून में कोई भौतिक दृष्टिकोण से अन्तर नहीं है और वह ही परमात्मा की ओर झुक सकता है जिसका विचार शुद्ध नहीं उसका आचार शुद्ध होने का प्रश्न ही नहीं उठता है। इसी कारणवश हमारे सिलसिले के सभी बुजुर्गों ने सदाचार हक और ईमान की कमाई पर जोर दिया है।

आप कहा करते थे कि जिसका जो हक है, उसे अवश्य अदा करें अर्थात माता–पिता, देश–जाति, रिश्तेदारों आदि का यथा योग्य शास्त्रों के अनुसार हक अदा करों तथा पत्नी और पुत्र सभी का हक अदा करो। सबके प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करो। केवल रुपया लेकर उसे वापस न देना ही कर्जदार नहीं कहा जाता है बल्कि अपने कर्तव्यों का भलीभाँति पालन न करना भी कर्जदार की श्रेणी में व्यक्ति को लाकर खड़ा कर देता है। इसलिए सदा अपने कर्तव्यों का विधिवत पालन करो और अपने फर्ज को पूरा करो क्योंकि वह सच्चरित्रता का गौरव है और सच्चरित्रता व्यक्ति का भूषण है।

राजनीति के आप बहुत विरुद्ध थे, वे कहते थे कि राजनीति का आधार कूटनीति है। कूटनीति और धर्म एक साथ नहीं चल सकता है। इन दोनों का रास्ता अलग अलग है।

प्रभू द्वारा दी हुई नियमतों का शुक्रिया अदा करना प्रत्येक प्रेमी का कर्तव्य है। ऐसा करने से मनुष्य का मन शुद्ध होता है।

पूज्य ताऊ जी कहते थे कि दूसरे का दिल नहीं दुखाना चाहिए। किसी से नफरत नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे अशान्ति होती है। मनुष्य को मीठे

बोल बोलना चाहिए जिससे दूसरे का दिल न दुःखे और अपना भी मन शान्त रहे। क्योंकि क्रोध, क्रोध करने वाले को स्वयं हानि पहुँचाता है।

जिस प्रकार प्रभू की नियामतों का शुक्रिया अदा करना चाहिए उसी प्रकार यदि प्रयास करने पर भी सुख न मिले जैसे शारीरिक व्याधियाँ, आर्थिक कठिनाइयाँ मिले तो उसे भी प्रभू द्वारा दी हुई नियामत समझना चाहिए। क्योंकि इससे साधक की आत्म शुद्धि होती है। कभी–कभी गुरुजन इन्हीं व्याधियों के द्वारा जन्म जन्म के कष्टों को काट देते हैं। इसी से सन्त मत के सभी बुजुर्गों ने और सूफी संतों ने तथा ऋषियों ने दुःख को वरदान कहा है जिसमें उस प्रभू की याद बनी रहती है।

''फरीदा दुःख सुख इक कर, दिलते लाहि विकार।
अल्ला भावै सो भली, तां लगी दरबार ।।''

पूज्य ताऊ जी कहते थे कि फकीरी की तीन शर्तें हैं:–

1. इल्लत यानी उसे कोई शारीरिक कष्ट हो।
2. किल्लत यानी उसे आर्थिक कठिनाई हो।
3. जिल्लत अर्थात संसार कुछ समय तक उसकी निन्दा करे, परन्तु यह अस्थायी है वे तो पूज्य हैं, पूजे ही जायेंगे।

फकीर शब्द चार वर्णों से मिलकर बना है। 'फ' का अर्थ है फाका 'क' का अर्थ है किनायत यानी वरदाश्त 'य' का अर्थ है यादे खुदा (परमात्मा की याद) रियाज इस प्रकार सांसारिक कठिनाइयों को भी प्रभू का वरदान समझना चाहिए।

पूज्य ताऊ जी सबसे हिते कि वंश के महापुरुषों का बहुत आदर करना चाहिए। वे स्वयं भी पूर्वजों का बहुत आदर करते थे और सदा उनसे दुआ करते थे। अपने वंश के महापुरुषों का तो आदर करते ही थे परन्तु अन्य मतों के संतों का भी वह बहुत आदर करते थे। इसका ज्वलन्त उदाहरण यह है कि आप जब गोरखपुर गये तो वहां सन्त बनर्जी साहब को आपने बहुत आदर दिया। जितने दिन वहाँ रहते थे आप नित्य ही स्वयं उनसे मिलने जाया करते थे।

चमत्कार और सिद्धियों के वे खिलाफ थे क्योंकि इनको रास्ते की रुकावट समझते थे और सदैव इनसे बचने के लिए कहते थे क्योंकि यह पतन की ओर ले जाती है और असल उद्देश्य से दूर कर देती है। वैसे उनका स्वयं का जीवन ही एक चमत्कार था जैसा कि आगे की घटनाओं में उल्लेख है परन्तु आप सिद्धियों के प्रदर्शन के विरोध में थे।

पूज्य ताऊ जी कहते थे कि हर सत्संगी को चाहिए कि वह अपनी स्त्री एवं बच्चों को हमख्याल अर्थात् परमात्मा के ख्याल वाला बनायें। इससे वातावरण की शुद्धि होती है और संतान से नैतिक गुणों का विकास होता है। जिस प्रकार मन जब परमार्थ की तरफ झुक जाता है यानी घाट बदल लेता है तो परमार्थ में बड़ी ही सहायता देता है क्योंकि मन बड़ा ही शक्तिशाली है। ''मन एवं मनुष्याणां कारण बन्धमोक्षयोः'' ऐसा शास्त्रों में भी कहा गया है।

दिल ही की बदौलत रंज भी है, दिल ही की बदौलत रात भी। यह दुनियां जिसको कहते हैं, जन्नत भी और दोजख भी।।

ठीक इसी प्रकार यदि स्त्री को परमार्थ के विचारों वाली बना लो और उसके दुर्गण दूर हो तो वह परमार्थ के रास्ते में सही माने में अर्द्धांगिनी साबित होती है। स्त्री की कमहोर और हेय न समझो। कोशिश करके अपनी स्त्री को अपना हमख्याल बनाने की कोशिश करो। यदि ऐसा कर लोगे तो घर स्वर्ग बन जायेगा और शान्ति मिलेगी।

पूज्य ताऊ जी शजरा (वंशावली) के पढ़ने पर तथा चौमुखा जाप पर बहुत जोर देते थे, और सभी से इसको नित्य ज्यादा से ज्यादा करने को कहते थे। गायत्री मन्त्र एवं दरूद शरीफ को भी आप करवाते थे। प्रसाद के समय एवं वैसे भी अससलाम भी पढ़वाते थे। आप प्रेम से भरे भजन भी बहुत प्रेम से सुनते थे। उसमें भाव विभोर हो जाते थे।

आचरण अर्थात नैतिकता पर बहुत जोर देते थे। वे कहते थे कि मन पर कभी भरोसा मत करो यह धोखेबाज है। अपने चरित्र को ठीक रखने के लिए सबसे अच्छा उपाय है कि प्रभू से विनय करो और कभी अपने आप की एवं मन की परीक्षा मत लो। स्त्रियों एवं लड़कियों का जोर–जोर से हँसना या लड़कों पुरुषों से अनाप शनाप बात करना या आजकल की तरह से कपडत्रे जिसमें शरीर पूरा न ढकता हो, उन्हें पसन्दनहीं था। इसके अतिरिक्त भी कुछ नियम थे जो कि शजरा में दिए गये हैं। जिनको लिख देना पाठकों को उनकी शिक्षा से परिचित कराना ही मेरा उद्देश्य है। चह नियम ऐसे हैं जिनपर चलकर हर व्यक्ति परमात्मा के प्रेम की तड़प हासिल कर सकता है अपने जीवन को सफल बना सकता है, वे नियम हस प्रकार हैं–

1. सुबह सूरज निकलने के पहले प्रत्येक मनुष्य को उठना चाहिए।
2. प्रत्येक मनुष्य नौकर साहित घर की सफाई में लग जावे। कोई झाडू दे कोई खाट उठाकर विछावन को क्रम से तह करके एक और रक्खे और कोई किसी कपड़े से हर चीज को झाड़ दे।

3. सब लोग शौचादि से निवृत्त होकर अगर स्नान करने की आवश्यकता हो तो स्नान करे, वरना हाथ मुँह धोये, अगर समय नहीं तो नहाने की जरूरत नहीं है ताकि पूजा का समय न निकल जाय।
4. एक स्थान या एक कमरा पूजा के लिए नियुक्त करना चाहिए। इसमें सुगन्धित धूप सुलगानी चाहिए।
5. साफ कपड़े बदल लें जो इस काम के लिए अलहदा रखना चाहिए।
6. पूजा प्रार्थना से आरम्भ की जावे। एक मनुष्य पढ़े सब उसको दोहरावें। चाहे भजन से प्रार्थना की जावे। एक मनुष्य भजन गावे शेष सब सुनें। इसके उपरान्त परमात्मा के ध्यान में लवलीन रहें अन्त में फिर प्रार्थना की जाय। यह सब सुबह सात बजे तक सम्पूर्ण हो जाना चाहिए।
7. यदि समय हो तो सीसरे पहर धार्मिक पुसतकों का अध्ययन करे।
8. शाम को सन्ध्या के समय सुबह की भाँति भजन और आन्तरिक अभ्यास करें।
9. दस बजे रात्रि को सो जाना चाहिए। सोने से पहले बिस्तर पर बैठे या लेटकर ध्यान करे, और उसी ध्यान में ही सो जाना चाहिए।
10. जाड़े में सबेरे साढ़े छः बजे और गर्मी में साऐ पाँच बजे उठ जाना चाहिए।
11. जो अविश्वासी हों, उसे सत्संग में शामिल न करें और उनके साथ से भी बचें।
12. सत्संगियों का फर्ज है कि झूँठ से परहेज करें जहाँ तक मुमकिन हो, हक हलाल की कमाई पर गंजारा करें।
13. गैर औरतों और छोटे बच्चों से परहेज करें। जुआ किसी किस्म का न खेलें।सिनेमा वगैरह से जहाँ तक हो सके, परहेज करें। किसी की बुराई न करे और जहाँ तक हो सके एकान्त का सेवन करें।
14. हर किस्म के नशे से बचे। गोश्त का इस्तेमाल न करे और किसी पार्टी में मेम्बर न बने। किसी का दिल न दुखाये।
15. हर मत के अवतारों, पैगम्बरों और बुजुर्गों की समान रूप से इज्जत करे हर मजहब की किताबों को इज्जत की निगाह से देखें।
16. प्रत्येक व्यक्ति अपनी आमदनी में से दो पैसा प्रति रूपया बचावे। इसमें से आधा जरूरतमंद रिश्तेदारों, अजीजों और यतीमों वगैरह की मदद में लगा दे। सत्संग में आने के लिए रुपया रक्खें और बचा हुआ शेष भाग को भेंट कर दें प्रतिवर्ष ऐसा ही करें।
17. जिस हालत में परमात्मा ने रक्खा है, उसमें खुश रहें, क्योंकि राजी–ब–रजा रहना ईमाने मोहब्बत है। अपनी दुनियाँ की तरक्की के

लिए मौज का सहारा लेने की कोशिश अवश्य करो परन्तु यदि कामयाबी न मिले तो उसी को मौज समझ कर परेशान न हो।

उपरोक्त पूज्य ताऊ जी कुछ शिक्षाऍ हैं, जो वे अपने श्रीमुख से सबसे कहते थे। किसी सन्त की शिखा या आध्यात्म की शिक्षा ऐसी नहीं जो पन्ने दो पन्ने में लिख दी जाय क्योंकि यह वह अमल्य निधि है तथा वह अथाह सागर है जिसके अन्तर में जितना भी डूबते चले जाओ उसकी थाह नहीं मिल सकती है।

जिन ढूँढा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैड।
मैं बापुरा डूबन मरा, रहा किनारे बैठ।।

यह एक या दो दिन में नहीं मिलती यदि जन्म भर में प्राप्त हो जाय तो बहुत समझिये। न जाने कितने जन्म लग जाते हैं तब जाकर कहीं कुछ मिलता है, और ठीक भी है जब सांसारिक भौतिकी विद्या जिससे हमें रोटभ का धन्धा करना है, उसमें परिश्रम एवं लगन के साथ 15–20 वर्ष लग जाते हैं तो यह विद्या जो सब विद्यायों में अमूल्य है, कल्याणकारी एवं सनातर ईश्वर से मिलाने वाली, शाश्वत शान्ति देने वाली है, उस विद्या को कैसे 2–4 वर्षों में सीखा जा सकता है, जबकि उसमें काफी लगन होता है और इसमें थोड़ा सा समय मिलता है। उसे भी नियमतः प्रभु की याद में नहीं लगा पाते हैं। पूज्य ताऊ जी की शिक्षा आध्यात्म की शिक्षा है। परमात्मा की प्राप्ति का आधार है। फिर वह पुस्तक के केवल दो–चार पन्नों द्वारा नहीं प्राप्त हो सकता और न समझ में आ सकता है। जैसे कि किताबी ज्ञान कोरा ज्ञान होता है इसलिए पूज्यपाद ताऊ जी आरम्भ के सत्संगियों को पुस्तक पढ़ने को मना करते थे। यदि पढ़ना है तो संतो के चरित्र पढ़ो जिससे उन महान ईश्वर प्रेमियों की जीवनी तुम्हारा आधार बन सके। यह विद्या पुस्तकीय ज्ञान से नहीं प्राप्त हो सकती। पुस्तक का ज्ञान तो उस निर्जीव चित्र के समान है जो पूज्यनीय तो है परन्तु आधार नहीं बन सकता। वह तो छाया है, उस ज्ञान की, जो कि सद्गुरु द्वारा मिलती है और जो तुम्हारे घर में है, जो केवल दो ही बातों के द्वारा मिल सकती है।

1. निज कृपा– वह भी जब वह ईश्वर चाहता है तभी हो सकता है वरना यह प्रचन्ड माया मनुष्य की बुद्धि एवं मन को ठहरने कहाँ देती है।
2. गुरु कृपा– जो कि अत्यन्त दुर्लभ है। वह किताबों में नहीं है। तुम्हारे अपने घट में है परन्तु जब सद्गुरु कृपा करेंगे, तब मन, बुद्धि चित्त अहंकार सबके पट खोल देंगे। तब कहीं उस प्रीतम प्यारे परम शान्ति रूप परम आनन्द धाम, परम शक्ति धाम, अमर, नित्य शाश्वत के दरबार में पहुँच होगी और उस प्रभु की झलक दिख जायेगी। जन्म–जन्म के

बन्धन कट जायेंगे। परन्तु यह सब अभ्यासएवं प्रयत्न से होगा। प्रेम से होगा। वह प्रेम केवल सद्गुरु के सत्संग से ही मिलेगा। किताबों से नहीं। इसीलिए मैं पाठकों से निवेदन करूँगा और क्षमा भी चाहूँगा कि उन महापुरुषों की शिक्षायें जो मैंने लिखी हैं, वह उनके उपदेश हैं जिनको मैंने उनके चरणों में रहकर सुना है और जो वह अपने श्रीमुख से आने वालों को बताते थे। अतः मैं बार–बार यही कहूँगा कि आध्यात्म की असल विद्या का वर्णन नहीं किया जा सकता है। यह रहस्य की बात है। न इतनी आसानी से प्राप्त ही होता है न आसानी से समझ में ही आ सकती है परन्तु फिर भी इन व्यावहारिक शिक्षा से लाभ उठाकर उन पर आचरण ही करें तो मनुष्य राक्षस बनने से बच जायेगा और कम से कम मनुष्य तो बन ही जायेगा। गुरुदेव कल्याण करें।

पूज्य ताऊ जी की जनहित के हेतु उपलब्धियाँ:–

आध्यात्म के क्षेत्र में उनके कार्य सराहनीय हैं। अपने पूज्यतम पूज्यपाद गुरुदेव पूज्य लालाजी महाराज के निर्वाण के पश्चात् आपने गुरुदेव द्वारा चलाये हुए मिशन का कार्यभार सम्भाला तथा उस कार्य को भारी लगन एवं श्रद्धा से किया और उनके मिशन का खूब प्रचार किया। जो अलौकिक पूँजी उन्हें अपने गुरुदेव से प्राप्त हुई थी उसको बड़ी ही सहृदयता से प्रेमीजनों को बाँटी। इस समय ईश्वर महान की अनुकम्पा एवं पूज्यनीय लालाजी तथा अन्य महापुरुषों के प्रताप से पूज्यनीय ताऊ जी का मिशन पूरे उत्तर भारत एवं बिहार में फैला हुआ है। उत्तर भारत के करीब–करीब सभी शहरों में उनके प्रेमीजन हैं जो अपने जीवन का लाभ उनके सत्संग द्वारा उठा रहे हैं। यद्यपि वे महापुरुष इस असार संसार को छोड़ परमपिता परमेश्वर की गोद में जा चुके हैं, तथापि उनका कार्य उसी प्रकार हो रहा है।

पूज्यनीय ताऊ जी ने अपने जन्म स्थान सिकन्द्राबाद में अपने आराध्यदेव अपने गुरुदेव की सेवा में एक वार्षिक भण्डारे की स्थापना की जिसमें सभी सत्संगी भाई हिनें आकर घर गृहस्थी से उपराम होकर केवल प्रभू की ओर चित्त लगाते हैं। यह भण्डारा दशहरे की छुट्टियों में सुविध को ध्यान में रखते हुए सन् 1933 से प्रारम्भ हुआ जो अभी भी प्रतिवर्ष मनाया जाता है और जिसमें सत्संगी भाई दूर–दूर से आकर आत्मिक लाभ उठाते हैं। यह भण्डारा तीन दिन का होता है जिसमें वंश के महापुरुषों की बड़ी कृपा होती है। इस सत्संग या भण्डारे की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें हर जाति, हर वर्ण, हर वर्ग यानी अमीर–गरीब, छोटे–बड़े, स्त्री–पुरुष, युवा–वृद्ध,

सब सम्मिलित होते हैं औरदूर–दूर से आये सत्संगी बड़े प्रेम का परस्पर अनुभव करते हैं। इसके अतिरिक्त वर्ष में विभिन्न स्थानों पर जैसे दिल्ली में श्री सरदार जी साहब की अध्यक्षता में, रुड़की में मेरे छोटे भाई डा0 वृजेन्द्र कुमार की अध्यक्षता में, बक्सर में बसन्त के ऊपर पूज्य लालाजी के जन्मदिन मुबारक पर श्री गोपाल जी के स्थान पर श्री सत्संग का आयोजन होता है। अन्य स्थानों पर भी भिन्न–भिन्न दिनों में जो दिन उन महापुरुष ने नियत कर दिए थे, वहाँ पर उस स्थान के लोग मिलजुल कर सत्संग करते हैं।

सत्संगियों एवं सत्संग परिवार के बच्चों तथा उनके सम्पर्क में आने वाले सभी लोगों के लिए पूज्य ताऊ जी ने एक मासिक पत्रिका का भी सम्पादन सन् 1954 में किया, जिसका नाम ''राम सन्देश'' रक्खागया जिसका प्रथम प्रकाशन पूज्यनीय बाबूजी जी डा0 श्यामलाल जी ने ही गाजियाबाद से करवाया। इस पुस्तक में आध्यात्म के गूढ़ तत्वों की विवेचना संत महान के जीवन परिचय एवं घटनाओं को दिया जाता है जिससे सबका लाभ हो। सन् 1955 में प्रकाशन हेतु सत्संग के चन्द्र द्वारा एक प्रेस की स्थापना की गयी जिसका मुख्य उद्देश्य आध्यात्म की पुस्तकों का प्रकाशन था। पूज्यनीय ताऊ जी ने बड़ी ही मेहनत इसके साथ की, परन्तु कार्य कुछ अकुशल लोगों के हाथ में चला गया, और कुछ वर्ष चलने के पश्चात् यह प्रेस न चल सका और अन्त में वह बेंच दिया गया। उस प्रेस का नाम भी पूज्य ताऊ जी अपने गुरुदेव के नाम पर ही रक्खा था। वह ''रामाकृष्ण'' प्रेस के नाम से विख्यात हुआ था। खेद की बात है कि उसको सुचारु रूप से न चला सकने के कारण बेंच दिया गया। पूज्य ताऊ जी ने बहुत सी पुस्तकें भी लिखीं जो आज भी उनके अमर ज्ञान से प्रज्जवलित प्रकाश सब पर डालती है। आपके श्री कमकमलों द्वारा रचित पुस्तकें निम्न हैंः–

1. जीवन चरित्र (श्री लालाजी महाराज)
2. अमृत रस

तथा उनके प्रवचनों के संकलन भी प्रकाशित किए गये हैं जो आध्यात्म के गूढ़ तत्वों पर प्रकाश डालते हैं।

पूज्य ताऊ जी ने गाजियाबाद में एक सत्संग कालोनी सन् 1955 में बनाई, जिसका नाम ''रामाकृष्ण'' कालोनी गाजियाबाद रक्खा गया जिसमें श्री डाक्टर करतार सिंह धींगरा दिल्ली (जिनको पूज्य ताऊ जी ने अपना उत्तराधिकारी भी बनाया है) तथा श्री काशीनाथ जी एवं श्रीकृष्ण जौहरी जी तथा मेरे पूज्यनीय श्रद्धेय बाबू जी डा0 श्यामलाल जी एवं मेरे जीजा जी डा0 विशम्भरनाथ जी सक्सेना ने वहाँ प्लाट खरीदा और यह ख्याल किया गया था कि सब समान विचारों के लोग मिलकर प्रेम एवं सहृदयता से ओत–प्रोत

रहेंगे। जिससे वहाँ के वातावरण में शान्ति एवं प्रेम बरसेगा। परन्तु दुर्भायवश ऐसा न हो सका। श्री सरदार करतार सिंह जी, पं0 काशीनाथ एवं अपनी जमीन का कुछ हिस्सा श्री कृष्ण जौहरी जी ने बेच दिया इस प्रकार करीब–करीब यह कालोनी तो उस नाम से प्रसिद्ध है परन्तु उसका उद्देश्य विफल हो गया। मेरे पूज्यनीय बाबूजी डा0 श्यामलाल जी वहाँ रहते हैं और सत्संग का कार्य एवं प्रेमीजन की सेवा निरन्तर कर रहे हैं। पूज्यनीय ताऊ जी ने सब योजनायें सत्संग के लोगों और सत्संग के दृष्टिकोण से ही चलाई थी परन्तु खेद है कि कुछ लोगों ने सत्संग को बहुत हानि पहुँचाई। जिसका पूज्य ताऊ जी को हार्दिक दुःख था। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, हर धर्म हर जमात में कुछ ऐसे लोग आ जाते हैं जो प्रत्यक्ष में तो हित चिन्तक लगते हैं और ऊपरी तौर पर सत्संगियों के सब नियम पूरा करते हैं परन्तु यह मानना ही पड़ेगा कि हर सत्संग में कुछ ऐसे ही मायावी लोग आ जाते हैं जो अपना समय नष्ट कराते ही हैं, दूसरों को भी सत्पथ से हटा देते हैं। तर्क वितर्क में सरल लोगों के हृदय को डाल देते हैं। यह अस्थायी रूप से प्रभावशाली भी हो जाते हैं परन्तु सच्चाई छिप नहीं सकती है। वह तो खुल कर ही रहेगी। सूर्य तो चमकेगा ही क्योंकि सूर्य का धर्म ही चमकना है। झूठे बादल उसे घड़ी दोघड़ी को ढक भी ले तो क्या। वह स्वयं छँट जायेंगे। रह नहीं सकते। फिर भी घड़ी पल को अँधेरा कर देते हैं। वही दशा ऐसे लोगों की है जो सत्संग को राजनीति स्वार्थपरता और झूठी प्रतिष्ठा का अखाड़ा बना लेते हैं। कुछ समय के लिए इनका बोलबाला हो जाता है। जिस प्रकार ''अधजल गगरी छलकत जाय'' वही इनका हाल है। बातें लच्छेदार करेंगे। ऊँचे–ऊँचे आदर्श, आत्मा–परमात्मा की तमाम रहस्य बतलायेंगे जो कि कोरी बकवास होती है। इसके विपरीत जो सच्चे प्रेमी हैं, शुद्ध हृदय हैं, वे शान्त भाव से अपने कार्य में लगाकर प्रभू पथ की ओर अग्रसर होते हैं। गुरू का प्रेम प्राप्त करके ईष्वर सच्चिदानन्द की दया से अपना तथा अपने परिवार का भला करके काम बना लेते हैं। यह पड़कर पाठकों के हृदय में प्रश्न अवश्य ही उठेगा कि समर्थ सद्गुरु ऐसे लोगों को आने ही क्यों देते हैं।सत्संग से निकाल क्यों नहीं देते हैं। जब कि वह पूर्ण समर्थ है। इसका उत्तर बहुत साफ है। चूँकि सन्तों का हृदय प्रेम और दया से परिपूर्ण रहता है और उनका शिष्टाचार बहुत ही आदर्शमय होता है। वह पूरे संसार को प्रभूमय देखते हैं, इस कारण वे उनको निकालते तो नहीं, पर उनकी ओर से उदासीन हो जाते हैं। गुरु का अर्थ पथ प्रदर्शक है। वह सूर्य की भाँति है जो अपनी ज्ञान की किरण से अपने प्रेम की गर्मी सब पर डालता है। वह पवित्र या अपवित्र नहीं देखता है। समर्थ सद्गुरु तो उस अमूल्य ईश्वरानन्द के मोतियों को फेंकता है

जिसको देख कर हंस भी आते हैं और कौवे भी। पर उन मोतियों को केवल हंस ही चुग सकता है। कौआ उसमें चोंच ही मार सकता है, परन्तु उसकी अमूल्यता को तो जान नहीं सकते हैं। कौओं की तरह ही कुछ लोगों ने पूज्य ताऊ जी के इन योजनाओं को पूर्णतयः असफल कर दिया। परन्तु मुझे पूर्ण विश्वास हे उनके द्वारा चलाया हुआ मिशन शाश्वत रूप से चलता रहेगा, ऐसे लोग कुछ भी हानि नहीं पहुँचा सकते हैं।

पूज्य ताऊ जी ने अपना निजी मकान सिकन्द्राबाद के एक हिस्से को सत्संग के लिए दान कर दिया जो सत्संग भवन के नाम से विख्यात है। ईश्वर से प्रार्थना है कि इन बुजुर्ग द्वारा लगाया हुआ यह सत्संग रूपी पौधा सदैव लहलहाता रहे।

पूज्य ताऊ जी तथा पूज्य बाबूजी का सम्बन्धः–

पूज्य ताऊ जी के जीवन चरित्र में यदि अपने पूज्यनीय बाबूजी (डा0 श्यामलाल) के सम्बन्ध को न लिखूँ तो वह कुछ एकांगी सा लगता है, क्योंकि इन दोनों महापुरुषों में एक ऐसा सजीव प्रेम था जो संसार में अन्यत्र नहीं दिखलाई पड़ता है। यदि है भी तो बहुत दुर्लभ। ये लोग एक दूसरे के पूरक थे। ऐसा प्रेम ऐसी उत्कट मर्यादापूर्ण, गौरवयुक्त प्रतिष्ठा थी दोनों में। पूज्य ताऊ जी एवं श्रीमान् बाबूजी का मिलन फतेहगढ़ स्कूल में ही हुआ। वहाँ पर पूज्य ताऊ जी उस समय लिपिक के पद पर नियुक्त थे और पूज्य बाबूजी वहीं शिक्षा प्राप्त कर रहे थे, वहीं से आप दोनों ही पूज्यनीय पूज्यपाद लालाजी महाराज के यहाँ जाने लगे और परस्पर स्नेह का अनुभव भी करने लगे। परन्तु सन् 1919 में जब गुरुकृपा से आप दोनों ही डाक्टरी की पढ़ाई करने आगरा मेडिकल कालेज में गये और एक ही कमरे में एक साथ रहे तो इस प्रेम में घनिष्ठ प्रेम का रूप से लिया और यह प्रेम इतना प्रबल हो गया जिसकी तुलना श्री राम और श्री भरत के बराबर की जा सकती है।

पूज्यनीय बाबूजी पूज्य ताऊ जी को प्रेम के साथ–साथ इतना आदर करते थे कि जब तक पूज्य ताऊ जी चारपाई पर करवट नहीं ले लेते थे, तब तक पूज्य बाबू जी लेटते नहीं थे। इतना ही नहीं पूज्य बाबूजी कभी पूज्य ताऊ जी अलग नहीं बोले वह जो भी कहते थे उसको वे सर्वमान्य कर देते थे। यद्यपि श्रीमान पूज्यनीय बाबूजी को सब इजाजतें थी लेकिन कभी उन्होंने अलग बैंत नहीं किया। सदा पूज्य बाबूजी पूज्य ताऊ जी के साथ रहे परन्तु दुर्भाग्य से 1959–60 में अकारण ही कुछ अलगाव सा हो गया। पूज्य बाबूजी ने अपना सत्संग अलग कर लिया। इसके बावजूद भी उनके हृदय अलग नहीं हुए। परिस्थितियों के वशीभूत होने के कारण सत्संग अलग अवश्य हो

गया परन्तु हृदय अलग न हो सके। उनमें विलगाव न हो सका। इसका उदाहरण यह है कि बहुत से सत्संगी भाई जिनको पूज्यनीय ताऊ जी ने ही बैत किया था परन्तु वह भी पूज्यनीय बाबूजी के सत्संग से उनसे बराबर फैजयाब हो रहे हैं।

पूज्यनीय बाबूजी सदैव कहते रहे हैं और अब भी कहते हैं तथा कई बार मुझ सेवक को भी कृपा कर आपने पत्र में लिखा है कि पूज्यनीय ताऊ जी पर पूज्यपाद लालाजी की सभी विद्यायें थीं जो उन्होंने उनको विशेष प्रेम में सिखाया था। यही पूज्यनीय बाबूजी सदैव कहते हैं कि पूज्य लालाजी एवं चाचा जी के बाद अगर मैंने दुनिया में किसी की उतनी इज्जत की है तो वह परमपूज्य भाई साहब अर्थात ताऊ जी ही रहे हैं। 60 वर्ष तक उन दोनों में बराबर वही प्रेम बना रहा। पूज्यनीय बाबूजी पूज्य ताऊ जी का इतनाआदर करते थे कि पूज्यनीया ताई जी के स्वर्गवास के पश्चात् जब पूज्य ताऊ जी परेशान थे तो पूज्य बाबूजी दो महीने छुट्टी लेकर उनके पास रहे। यह समय ऐसा था कि वे लोग पल भर भी नहीं बिछुड़ते थे। पूज्य बाबूजी हुक्का पीते थे परन्तु वह नहीं चाहते थे कि पूज्य ताऊ जी को इसका पता चल सके। इसी कारण उन्होंने हुक्का छोड़ दिया और कभी हाथ नहीं लगाया।

दोनों परिवार भिन्न नहीं लगते थे। घर का कोई भी काम चाहे वह विशेष महत्वपूर्ण हो या कम, परन्तु पूज्य ताऊ जी की स्वीकृति से ही होता था। धन सम्पत्ति किसी भी वस्तु का भेद भाव नहीं था। एकबार पूज्य ताऊ जी की द्वितीय पुत्री शान्ति बोबो (जिनको सेवक ने सदैव बहन माना है) की शादी थी। संयोगवश पैसे का प्रबन्ध न हो सका। पूज्य ताऊ जी कुछ परेशान थे। परेशानी जानने पर पूज्य बाबूजी ने एक बक्स चाँदी के जेवर जो कि मेरी पूज्यनीया माँ का था और जिनका स्वर्गवास हो चुका था, पूज्य ताऊ जी को दे डाला जिससे शादी का सारा प्रबन्ध हो गया। ठीक इसी प्रकार का प्रबल प्रेम पूज्य ताऊ जी को भी हमारे परिवार से था एवं विशेष रूप से पूज्यनीय बाबूजी एवं मुझ सेवक से था। एक बार जब बीमारी की अवस्था में पूज्य बाबूजी पूज्य ताऊ जी को देखने सिकन्द्राबाद गये और उनसे याचना की क्या आप मुझसे नाराज हैं तब पूज्य ताऊ फफक–फफक कर रो पड़े और कहा ''श्यामलाल जबसे तुम अलग हुए हो मुझे एक दिन भी सुख नहीं मिला।'' यह था उनका उत्कट प्रेम। वे सदैव कहते थे कि श्यामलाल हीरा हैं और उनकी बड़ी प्रशांसा करते थें एकबार की बात है कि पूज्य बाबूजी अत्यधिक बीमार पड़ गये। बचने की कोई आशा नहीं थी। लखनऊ मेडिकल कालेज में उन्हें भर्ती किया गया साथ मे पूज्य ताऊ जी रहते थे। डाक्टरों ने कहा कि इनका हिलना–डुलना मना है क्योंकि दिल बहुत कमजोर है। पूज्य ताऊ जी बहुत

परेशान थे। पूज्य बाबूजी को चारबाग स्टेशन ले जाना था। चारबाग स्टेशन मेडिकल कालेज से करीब चार मील की दूरी पर है। पूज्य ताऊ जी ने सोचा यदि सवारी पर ले जाऊँगा तो हिले डुलेगा अवश्य और तकलीफ भी होगी। पूज्य ताऊ जी पूज्य बाबूजी को अपनी पीठ पर लाद कर पैदल ही आहिस्ता–आहिस्ता ले गये। देखने वाले दंग हो गये और पूछने लगे कि क्या ये आप के बेटे हैं तो पूज्य ताऊ जी ने कहा कि नहीं यह मेरा छोटा भाई है। ऐसा भ्रार्तप्रेम था, ऐसा प्रेम जल्दी दिखाई नहीं पड़ता। विचारो की इतनी समानता कि जो बात पूज्य ताऊ जी कहते, उसको कोसों दूर बैठे पूज्य बाबूजी वैसा ही कह देते। यही तारतम्य दोनों का था। इस विषय में जितना लिखूँ उतना ही कम है क्योंकि लिखने पर इसी पर स्वयं ही एक पुस्तक बन जायेगी। अब पूज्य ताऊ जी एवं पूज्य बाबूजी के चरणों में प्रणाम करके एक ऐसी बहन की सेवा का वर्णन करता हूँ जिसका उल्लेख भी इस पुस्तक में अत्यन्त आवश्यक है और जो पूज्य ताऊ जी के भतज्वत्सल्ता पर प्रकाश डालती है।

शर्मा बहिन की सेवाः–

सत्संग परिवार का प्रत्येक सदस्य शर्मा बहिन को अच्छी तरह से जानता है परन्तु अन्य पाठकों के हेतु उनका परिचय दे दूँ। शर्मा बहिन जो कासगंज जिला एटा में रहकर मिडवाइफरी का काम करती थीं, परन्तु वह अकेलेपन या किन्हीं कारणों से काफी उद्विग्न रहती थीं, तथा कुछ मानसिक संतुलन बिगड़ गया था। संसार में मन नहीं लग रहा था। ऐसी ही दशा में सन् 1961 में जब पूज्य ताऊ जी सत्संग के सिलसिले में कासगंज गये थे तो शर्मा बहिन ने उनके दर्शन किए और बसन्त के भण्डारे से पहले जो गोरखपुर में होना निश्चित था, उन्होंने उनको दीक्षा भी दी। सन् 1963 में जब वह मानसिक रूप से बहुत ही असंतुलित हो गयीं तो दयालु ताऊ जी ने दया करके उन्हें सिकन्द्राबाद ले आये। यहाँ अपनी दया से उन्होंने धीरे–धीरे उनकी स्थिति सुधार दी। उन्होंने भी पूज्य ताऊ जी की बहुत सेवा की। सारे सत्संगी परिवार में शर्मा बहिन की सेवा में मुकाबिले मेंकिसी ने सेवा नहीं किया जिसका प्रतिफल ताऊ जी ने भी उन्हें खूब दिया। जिस समय शर्मा बहिन सिकन्द्राबाद गयीं थी उस समय पूज्य ताऊ जी की वृद्धावस्था थी और वह प्रायः बीमार ही रहने लगे थे। शर्मा बहिन ने बड़ी ही प्रेम एवं लगन से उनकी निःस्वार्थ सेवा की। उनकी इस सेवा का पूरा सत्संग परिवार आभारी है। पूज्य ताऊ जी भी उनकी इस सेवा से काफी द्रवित थे क्योंकि जब मैं उनको देखने सिकन्द्राबाद गया और वहाँ से वापस होने पर चलते समय उन

महापुरुष ने मुझसे यह कहा ''नन्हें! तू ऐसे वख्त आया है कि जब मैं इस काबिल नहीं कि तुझे कुछ दे सकूँ पर मेरी तमाम विद्या तुम पर है। मेहनत करोगे तो जरूर खुलती जायगी। सब भाई मिलकर काम करना और बेटे इस शर्मा का ख्याल करना, इसने मेरी बहुत सेवा की है अगर इसको कोई कष्ट होगा तो मुझे बहुत कष्ट होगा।'' इतना कह कर आप खामोश हो गये और बहुत स्नेह से विदा किया। इससे मैंने यह अनुमान लगाया कि आपको कितना स्नेह इनसे था। सभी सत्संगी भाई बहिन शर्मा बहिन का आदर करते हैं और वह भी सबसे विशेष प्रेम रखती हैं। उनकी निःस्वार्थ सेवा के कारण ही आपने यह निश्चित कर दिया था कि उनको सत्संग से ही सदा खर्च मिलता रहेगा और यदि ये सिकन्द्राबाद रहें तो उनको दो कमरे दिए जाये जिसका किराया उनको मिलता रहे। पूज्य ताऊ जी ने इसे एक वसीयत के रूप में कर दिया था।

पूज्य ताऊ जी सेवा में शर्मा बहिन का सारा समय लग जाता था। वह स्वयं कहती हैं कि उन्होंने पूजा नहीं जानी और कभी पूजा में नहीं बैठती थीं। पूज्य ताऊ जी ने शर्मा बहिन को सुबह संध्या में आने के लिए कहा पर वह कहती थीं कि ध्यान करने से मेरे सिर में दर्द होने लगता है। फिर उनसे कभी पूजा में बैठने के लिए ताऊ जी ने नहीं कहा। एक बार उन दयालु ने पूछा कि ''तुझे कुछ आवाज सुनाई पड़ती है'' उसका उन्होंने हँस कर उत्तर दिया (हँसकर इसलिए कि सदैव सेवा में रहने से वे विनोद भी कर लेती थीं) कि ''मुझे फुरसत कहाँ रहती है कि मैं आवाज सुनूँ'' परन्तु शर्मा बहिन कहती हैं कि उसके कुछ ही दिन पश्चात वे महापुरुष महासमाधि में लीन हो गये। जब उस स्थान पर जहॉ पर आपका अन्तिम संस्कार हुआ था, दर्शन करने गयीं तो अचानक ही अत्यंत मधुर स्वर नाभि से लेकर सिर तक में सुनाई पड़ने लगा तथा एक स्वर्णमयी सिंहासन भी बहुत ही चमकता हुआ दिखाई देने लगा। यह सब उन महापुरुष के दया का प्रभाव था।

''गुरु की महिमा है अमित, कहि न सके श्रुति शेष।
जिनकी कृपा कटाक्ष से, रंकहु होत नरेस।।''

जो गुरू कीन्ह चाहै, सोई होई।
करै अन्यथा असि, नहीं कोई।।

आपने यही नहीं एक और बहिन स्वर्गीया नन्हों बीबी जिन्होंने पूज्यनीया ताई जी की मृत्यु के पश्चात उनके खाने पीने आदि का प्रबन्ध किया था और सेवा की थी उनको पूज्य ताऊ जी ने अपनी जतमीन में से थोड़ी सी जमीन

देकर वहीं पर उनका मकान बनवा दिया है जिसमें कि हम लोगों ने ईंटे तक ढोई हैं और पूज्य ताऊ जी ने स्वयं बैठकर बनवाया है इतना ही उनकी नौकरी भी लगवाई। आज वह बहिन नहीं हैं, परन्तु अपने जीवन काल में उन्हें सभी सुख एवं सुविधायें थी। आप विधवाओं और यतीम बच्चों पर काफी कृपा रखते थे। उनका सदैव ध्यान रखते थे।

पूज्य ताऊ जी की वृद्धावस्थाः—

पूज्य ताऊ जी की वृद्धावस्था थी। उन्हें डायबिटीज और हाई ब्लडप्रेशर हो गया था परन्तु फिर भी वे महापुरुष सत्संग तथा आये हुए लोगों की पूरी सेवा करते थे। शरीर काफी दुर्बल हो गया था फिर भी वे सत्संग के लिए बाहर भी जाते थे। सन् 1969 के बसन्त के भण्डारे में बक्सर में ही उनकी तबियत खराब हुई परन्तु फिर भी आपने आने—जाने का काम नहीं छोड़ा और सन् 1969 के अप्रैल में रामनवमी पर श्री बृजेन्द्र कुमार सक्सेना जी रुड़की के यहाँ से सत्संग से लौटने के पश्चात से आप प्रायः बिस्तर पर ही रहने लगे। सन् 1969 मई में आपने सब सत्संगियों को बुलवाया और सबसे खूब प्रेम से मिले। वैसे तो वह महान पुरुष स्वयं ही प्रेममय थे, अब और भी अधिक हो गये थे। उसी भण्डारे के बाद से उनकी तबियत अधिक खराब होती गयी। आप हर समय सिलसिले के बुजुर्गों को अपने पास देखा करने लगे। शर्मा बहिन कहती हैं कि वे बहुधा कहते थे कि ''अरे मुझे साफ कपड़े बदलाओ। देखों कितने बड़े—बड़े लोग आ रहे हैं। मुझे साफ कर दो देखेंगे तो क्या कहेंगे। अभी चन्द्रायण है, मैं अभी नहीं जाऊँगा। अभी उत्तरायण में कुद देरी है। उसी में यात्रा करूँगा'' 16 मई के शाम से आपकी तबियत गैर सी होने लगी। 16 तारीख को ही आपने सब कपड़े बदल डाले, बिस्तर आदि भी बदल डाले। शान्तिपूर्वक लेट गये। प्रभू से मिलाप का समय नजदीक हो गया। 17 मई की शाम से वे बिल्कुल न बोले। 18 मई की प्रातःकाल की बेला में सत्संग के कमरे में ही ईष्वर की उस अखण्ड ज्योति ने अपने पार्थिव शरीर को त्याग दिया और अपने असल भण्डार में सदा के लिए विलीन हो गयी। सारे सत्संग परिवार को विलखता छोड़ वे महापुरुष महाप्रयाण कर गये और वह आध्यात्मिकता का सूर्य अस्त हो गया। जो दुःख हुआ वह वर्णन नहीं किया जा सकता है। उनके महाप्रयाण के समय उनके दो पुत्र डा0 हरीकृष्ण एवं श्री राधेकृष्ण भटनागर तथा कर्तार सिंह धींगर वहाँ पर थे, सेवक तथा पूज्य बाबूजी एवं मेरा छोटा भाई श्री ब्रजेन्द्र कुमार सक्सेना (जिनको उन्होंने उत्तराधिकारी नियुक्त किया है) सब अपने चाचा के पुत्र की शादी में बदायूँ गये थे। खबर मिलते ही ऐसा लगा जैसे ऐ ही तो दुनिया में मेरा चाहने वाला

था वह भी पर्दा कर गये। मैं और बाबूजी अपनी श्रद्धा उन महान के चरणों में अर्जित करने के लिए फौरन चल दिए। 20 की सुबह उसी समय पहुँच सके जब आपकी यात्रा आरम्भ हुई थी। देखा तो ऐसा लगा कि जैसे दिल मुर्दा हो गया हो। मैं बेचैन था! स्थान पर गया! वहाँ की दरोदीवार उन हसरत भरी दिनों की यादों को ताजा कर गये। जहाँ प्रवेश होते ही पहले आध्यात्मिक एवं प्रेम के वातावरण में पहुँच जाता था और उस मोहनी सूरत को देखते ही एकदम प्रफुल्लता का अनुभव करता था, वहाँ मुर्दानी सूरत को देखते ही एकदम प्रफुल्लता का अनुभव करता था, वहाँ मुर्दानी छायी हुई नजर आ रही थी। वह प्रेममयी मूरत और उस आध्यात्म के सूर्य के डूब जाने से वहाँ अन्धकार ही लग रहा था।

1 जून को उनके स्थान सिकन्द्राबाद में आपकी तेरहीं का कार्य सम्पन्न हुआ, सब भाई बहिन बड़ी संख्या में जमा हुए और बहुत बड़ी मात्रा में खाना, पूड़ी कचौड़ी, आलू, काशीफल, लड्डू आदि बना तथा बड़ी संख्या में गरीबों को बाँटा गया फिर भी काफी लड्डू, पूड़ी, कचौड़ी बच गयी।

''कालु विकालु कहे कहि बपुरे, जीवत मुआ मनु मारी।''

चरणारविदं गोविन्दं नमामि।
गुरुदेव शरणं गुदेवं नमामि।।
भवो–भाव्य भावं त्रयताप हारं,
भवभय नाशं गुरुदेव नमामि।।

पूज्य ताऊ जी के जीवन की कुछ घटनायेंः–

वस्तुतः सन्त महात्मा देश काल की परिधि में सीमित नहीं होते। उनकी वाणी सार्वजनिक और सर्वकालीन होती है। उनका जीवन एवं उदात्त चरित्र घटनाओं से परिपूर्ण होता है, जिससे प्रेरणा मिलती है। यह तो सर्वविदित सत्य है कि वे असाधारण पुरुष असाधारण शक्ति से परिपूर्ण होते हैं। उनका पूरा चरित्र ही अद्भुत घटनाओं से परिपूर्ण होता है। वे चमत्कार से पूरे रहते हैं क्योंकि उनका सम्बन्ध आत्मा एवं परमात्मा से होता है। जो अद्भुत है। अब आगे मैं कुछ अद्भुत चरित्र की घटनाओं का उल्लेंख करना अपना धर्म समझता हूँ, जिससे उनके उदान्त चरित्र की घटनाओं से पाठकों को शिक्षा मिल सके। इसके साथ–साथ उन महापुरुष के ज्योर्तिमय जीवन चरित्र, जो अलेखनीया, असीमित, अपार है जिसको सेवक ने उन्हीं की कृपा से लेखनबद्ध किया है, को समझने और प्रेम करने की प्रेरणा मिल सके।

मैंने बार–बार कहा है कि संत प्रेममय होते हैं और पूज्य ताऊ जी की तो यह सबसे बड़ी विशेषता थी। वे मुझ सेवक से अत्यंत प्रेम करते थे वैसे वे सबसे प्रेम करते थे और सबको यही अनुभव होता था कि मुझसे अधिक प्रेम करते हैं। जहाँ तक मेरा अनुमान है कि सत्संग के पूरे परिवार के हर प्रेमी भाइयों के जीवन में कुछ न कुछ अद्‌भुत घटनायें उन महापुरुष से सम्बन्धित हैं। यहाँ पर मैं अपने जीवन की निजी घटनाओं का वर्णन करूँगा क्योंकि वह मेरे जीवन की स्वयं की अनुभूति है। घटनाओं के उल्लेख न करने से उनके महान चरित्र का बहुत बड़ा भाग प्रेमी भाइयों के सामने आने से रह जायेगा। सेवक अपने जन्म से लेकर सन 1960 तक उनके बहुत अन्तरंग रहा है, इससे वे भी दया करके सेवक से बहुत प्रेम करते रहे हैं।

घटनायें:–

1. 1 अप्रैल, 1949 की घटना है कि मैं तथा सेठ भाई साहब (मेरे बड़े भाई) हाई स्कूल की परीक्षा बुलन्दशहर में दे रहे थे। शाम के करीब चार बजे पूज्य ताऊ जी सिकन्द्राबाद से तशरीफ लाये। पूज्य बाबूजी ने हम लोगों से कहलवाया कि ताऊ जी आये हुए हैं (क्योंकि हम लोग मकान के ऊपर वाले कमरे में रहते थे और घर के सभी लोग नीचे रहते थे) हम खुश होकर उनके दर्शन को दौड़े हुए आये, उनके पैर छुए। आप बहुत ही अच्छे मूड में बैठे हुए थे, आपने परियाफ्त किया कहो बेटे! परचे कैसे हो रहे हैं'' हम लोगों ने कहा ''ठीक हो रहे हैं'' आपने कहा कि ''तेरी तो फर्स्ट क्लास आयेगी और सेठ की सेकेन्ड क्लास'' जब परिणाम घोषित हुआ तो उनकी भविष्यवाणी सत्य हुई। मेरी फर्स्ट क्लास और सेठ भाई साहब की सेकेन्ड क्लास।

2. उनके जाने के तीसरे दिन सिविक्स का पर्चा था। हम लोग सदैव ही पर्चा मिलने पर प्रथम पूज्य ताऊ जी का ध्यान करके ही लिखना प्रारम्भ करते थे। उस दिन ध्यान करने के बाद जब पर्चा पड़ा तो पर्चा बहुत ही सख्त था। हम दोनों ही को अर्थात मैं और मेरे बड़े भाई साहब (डा0 राजेन्द्र कुमार) को ऐसा लगा कि नींद आ गयी और तीन घण्टे बाद जब मास्टर ने कापी माँगी तो ऐसा मालूम हुआ कि आँख खुल गयी। मैंने परचे का जवाब तीन कापियों में लिखा था जबकि अधिकतर लोगों ने एक ही कापी लिखी थी। घर आने पर तबियत बहुत परेशान रही और पूज्य बाबूजी से हम लोगों ने कहा कि हमारा आज का पर्चा खराब हो गया है। इस पर्चे में हमलोग शायद फेल हो जायें। पूज्य बाबूजी के पूछने पर हम लोगों ने बतलाया कि हम लोगों को पर्चा लिखते समय नींद आ गयी थी और हमें नहीं मालूम कि हमने क्या

लिखा है। पूज्य बाबूजी कोई खास परेशान नहीं हुए, और कुछ भी नहीं कहा। दो तीन दिन बाद जब परीक्षा खत्म हो गयी तो हम लोग सिकन्द्राबाद पूज्य ताऊ जी के दर्शन करने को गये। पूज्य ताऊ जी हम लोगों से बहुत प्रेम करते थे और मुझे अपना तथा सेठ भाई साहब को पूज्य बाबूजी का बेटा कहते थे। मैंने तथा सेठ भाई साहब ने रात में सलाह की क्यों न सुबह ताऊ जी से पूछा जाय। सुबह जब ताऊ जी पूजा करने बैठे तो मैंने कहा कि ''ताऊ जी पूजा में देख कर बताइए कि हम लोग सिविक्स में पास हो जायेंगे या नहीं'' तथा उन्हें पर्चा की बाबत सब बताया और कहा पर्चा बहुत ही कठिन था, यदि इसमें पास हो जायेंगे तो अवश्य पास हो जायेंगे। आप हँसने लगे और कहा कि ''पर्चा कैसा हुआ है यह तो करने वाला ही जाने, यदि तुमने मेहनत की होगी तो अवश्य पास होंगे वरना नहीं।'' इसके साथ यह भी कहा कि ''मैं पूजा में यह सब थोड़े ही देखता हूँ'' तबियत परेशान थी और हम लोग शाम को ही चलने लगे। जब पैर छुए तो आपने कहा ''बेटे!परेशान मत हो, परमात्मा पर भरोसा रक्खो, ईश्वर ने चाहा तो सब ठीक होगा।'' जब रिजल्ट आया तो सिविक्स के पर्चे में 50 में से 34 नम्बर मेरे थे तथा सेठ भाई साहब का 50 में से 33 नंबर थे, साथ–साथ पूरी क्लास में यह नम्बर सबसे अधिक था। पास होने के बाद जब मिलने गये तो बिना बतलाए ही आपने खुशी से हम लोगों का डिवीजन तथा नम्बर बतला दिया। ऐसा था आपका प्रेम एवं व्यवहार।

3. सन् 1954 में मैं M.Sc.P. में पढ़ रहा था और होस्टल का मानीटर भी था। मेरे होस्टल में एक लड़के ने एक दूसरे विद्यार्थी के कमरे में आग लगा दी। उस विद्यार्थी का काफी सामान जल गया साथ–साथ होस्टल की कुर्सी मेज और चारपाई आदि भी जल गयी। जब मुझे मालूम हुआ तो मुझे बड़ा दुःख हुआ। जिस लड़के ने आग लगायी थी उसे मैंने बहुत डाँटा। शाम को वार्डेन से रिपोर्ट हुई, वार्डेन ने मुझे बुलाकर उसका नाम पूछा। मैंने उस लड़के का नाम बताने से इन्कार कर दिया, परन्तु आश्वासन दिया कि भविष्य में ऐसा कभी नहीं होगा। वार्डेन ने इस पर यह कहा कि या तो लड़के का नाम बताइए या होस्टल से निकल जाइए। इसी तरह सात दिन गुजर गये। आठवें दिन मेरे पूजा करने से पहले वार्डेन आये और आदेश दिया कि होस्टल अभी खाली कर दिया जाय। मैंने कहा कि अभी पूजा करने के बाद चला जाऊँगा। मैं पूजा करने बैठ गया। पूजा करते समय क्षणमात्र को आकस्मात यह ख्याल आया कि पूज्य ताऊ जी को यह सब लिखकर भेज दूँ। तबियत परेशान थी, समझ में नहीं आता था कि कहाँ जाऊँ। दोपहर के दो

बजे मेरे बड़े भाई सेठ भाई साहब गाजियाबाद से आये। उनके आने पर मालूम हुआ कि आज सुबह पूज्य ताऊ जी गाजियाबाद में थे और पूजा से उठने के बाद उन्होंने सेठ भाई साहब को यह आदेश दिया कि अभी आगरे चले जाओ क्योंकि नन्हें परेशान है। उसको होस्टल से निकाल दिया गया है। यह प्रेम तथा गायबाना मदद की एक मिसाल थी।

4. पूज्यपाद लालाजी को दो ही पेशे पसन्द थे। सबसे अच्छा डाक्टरी तथा दूसरा मास्टरी का पेशा। इसी प्रकार पूज्य ताऊ जी एवं बाबूजी को भी डाक्टरी पेशे से बड़ी उन्सियत थी और इसी ख्याल से हाई स्कूल के बाद हम लोगों को आगरे पढ़ने को भेजा। B.Sc. पढ़ने के बाद हम दोनों भाई मेडिकल में बैठे मगर नहीं आये जिसका पूज्य बाबूजी को बड़ा दुःख हुआ। इस पर उन्होंने यह भी कहा कि केवल डाक्टरी पढ़ाने के गरज से ही मैंने इतना पैसा खर्च किया और इतनी दूर पढ़ने को भेजा था। सरना यह पढ़ाई तो खुरजे या और कहीं भी हो सकती थी। मुझे स्वयं को डाक्टरी पेशा नहीं अच्छा लगता था। मैं दिल ये यह चाहता था कि किसी तरह सेठ भाई साहब डाक्टरी में आ जायें जिससे पूज्य ताऊ जी एवं बाबूजी की इच्छा पूरी हो जाये। इस कारण B.Sc. के बाद भाई साहब को M.Sc. करने की राय न देकर P.M.T. की तैयारी एक वर्ष करके उसमें बैठने की सलाह दी। मैंने स्वयं M.Sc. बाटनी में ज्वाइन किया। सन् 1955 में हम दोनों ही P.M.T. में बैठे। जुलाई में जब P.M.T. का रिजल्ट निकला तो सेठ भाई साहब लखनऊ मेडिकल कालेज में दाखिले के लिए चुन लिए गये और मैं कहीं के लिए नहीं चुना गया था। दूसरे दिन सुबह हस्ब–दस्तूर बाबूजी ने सेठ भाई साहब को सिकन्द्राबाद जाकर पूज्य ताऊ जी से आशीर्वाद लेने के लिए कहा। मैं भी साथ दूसरे दिन सिकन्द्राबाद पूज्य ताऊ जी के पास गया। आपको यह सुनकर कि सेठ भाई साहब डाक्टरी में आ गये हैं, बड़ी खुशी हुई। आपने पूछा कि तुम्हारा क्या हुआ। मैंने उत्तर दिया कि मेरा कहीं भी नहीं हुआ है। एक क्षण आप खामोश रहे फिर कहा कि परिणाम गलत है तुम्हारा चुनाव आगरे में हो गया है और तुम कल ही आगरे चले जाओ। आपके आदेशानुसार दूसरे दिन मैं आगरे चला गया और चुनाव लिस्ट देखा जिसमें मेरा नाम नहीं था। चुनाव लिस्ट देखने के बाद मैं लौटने को ही था कि देखा आप खड़े हैं और कह रहे हैं कि अपने नम्बर तो देख लो। नम्बर देखने पर मुझे आश्चर्य हुआ कि मेरा चौदहवी पोजीशन थी। मेरा चुनाव हो गया। यह सब उनकी कृपा का प्रसाद था जिसको जैसा चाहते थे वैसा ही बना देते थे और क्या कह सकता हूँ।

5. मैं फर्स्टइयर में आगरे के कालेज में पढ़ता था और मैं तथा सेठ भाई साहब गर्मियों की छुट्टी में घर आये हुए थे। मेरे पूज्य बाबूजी उस समय खुर्जे में हेल्थ आफीसर के पद पर तैनात थे। यह मई सन् 195 की घटना है। एक दिन पूज्य बाबूजी सुबह बाजार की गश्त से वापस आये उन्होंने मुझे और सेठ भाई साहब को बुलाया और काफी अरसे तक आत्मा और परमात्मा के बारे में बताते रहे। उस समय हम दोनों को ही यह बातें स्पष्ट तथा समझ में नहीं आईं। करीब ग्यारह बजे दिन को पूज्य बाबूजी ने हम लोगों को सिकन्द्राबाद जाने की आज्ञा दी। साथ में यह हिदायत भी किया कि जब तक पूज्य ताऊ जी की आज्ञा न मिले, वापस न आना। सिकन्द्राबाद पहुँचने पर पूज्य ताऊ जी के पास हम लोग सदैव की तरह रहने लगे। दूसरे ही दिन पूज्य ताऊ जी से जाने की आज्ञा माँगी क्योंकि उससे पूर्व हर साल हम लोग गर्मियों की छुट्टी में अपने गाँव कटिया चले जाते थे। ताऊ जी ने कहा कि अभी दो तीन दिन यहीं रुको। अगले दिन सुबह पूज्य ताऊ जी ने फरमाया "तुम दोनों नहाकर साफ कपड़े पहन आओ और वह प्रसाद जो रात में मैंने मँगाया था, अलमारी में से लेते आओ"। प्रसाद आपने अपने ही पैसे से मँगवाया था। 17 मई 1950 को आपने हम दोनों भाइयों को दीक्षा दी और फरमाया कि आज से तुम लोग बैत हो गये तथा यह बैत मैने बुजुर्गों के हुक्म से की है। अब तुम लोगों का सम्बन्ध बुजुर्गों से हो गया है और उसी दिन शाम को हम लोगों को वापस जाने की आज्ञा भी दे दी। खुर्जा वापस आने पर पूज्य बाबूजी ने पूछा कि तुम लोग इतनी जल्दी कैसे वापस आ गये हो। क्या पूज्य ताऊ जी ने तुमसे कुछ कहा नहीं। हम लोगों ने पूज्य बाबूजी को पूज्य ताऊ जी की चिट्ठी दी तथा यह भी बताया कि पूज्य ताऊ जी ने हम लोगों को बैत किया है। पूज्य बाबूजी ने बताया कि जब उस रोज मैं घूम कर वापस आ रहा था तो मैंने यह अनुभव किया कि पूजय लालाजी एवं पूज्य चाचा जी मेरे साथ हैं और कह रहे हैं कि दोनों बच्चे बड़े हो गये हैं, इन्हीं श्रीकृष्ण के पास भेज दो ताकि बैत हो जावें।

6. सन् 1954 को एक रात ख्वाब में देखा कि सिकन्द्राबाद में सत्संग हो रहा है और करीब–करीब सभी सत्संगी भाई वहाँ मौजूद हैं, इतने में सत्संग में बड़े जोर की आग लग जाती है और बड़ा शोरगुल मचता है तथा सभी सत्संगी भाई परेशान होकर इधर–उधर भाग रहे हैं। कुछ लोग पूज्य ताऊ जी के पास एक खेमें में चले जाते हैं, कुछ लोग बाबूजी के पास दूसरे खेमें में चले जाते हैं। इस तरह सत्संग दो भागों में बँट जाता है, परन्तु सभी सत्संगी भाई परेशान नजर आते हैं। बाद में पूज्य ताऊ जी से मैंने यह ख्वाब

बतलाया तो आपने फरमाया कि तुम्हारा कश्फ बहुत अच्छा है क्योंकि मेरे दिल में यह ख्याल उठा था और उसी का असर तुम पर हुआ।

सन् 1950 के अक्टूबर में मैं सिकन्द्राबाद सालाना भण्डारा में शामिल होने को जा रहा था। उस समय मैं आगरा मेडिकल कालेज में थर्डइयर में पढ़ता था। आगरे से चलकर रात को दो बजे दनकौर स्टेशन पर पहुँच गया (यह सिकन्द्राबाद का रेलवे स्टेशन है) करीब एक घण्टे वेटिंग रूप में रहा, उस समय यह ख्याल हुआ कि सवारी सुबह सात बजे ही मिल सकेगी क्यों ने पैदल ही चला चलूँ। कुल चार मील का फासला है, सुबह पहुँच कर पूज्य ताऊ जी का सबसे पहले दर्शन करूँगा। साथ ही सुबह की सन्ध्या भी मिल जायेगी। इस तरह मैं अपना सामान लेकर करीब तीन बजे रात्रि को सिकन्द्राबाद के लिए रवाना हो गया। करीब दो मील जाने के बाद मुझे थकावट मालूम होने लगी और बहुत ही ठंड लगने लगी, इस पर क्षण मात्र को यह ख्यला आया कि यदि कोई सवारी मिल जाती तो बहुत ही अच्छा होता क्योंकि ठंड और सामान के बोझ के कारण मुझसे चला न जा रहा था। इतना सोचा ही था कि देखता हूँ कि अचानक खेत की ओर से एक इक्का जिस पर कुछ सब्जी लदी हुई थी, चला आ रहा था और मेरे पूछने से पहले ही उसने पूछा 'बाबू जी चलिए सिकन्द्राबाद उतार दूँगा'' मैं इक्के पर बैठ गया मुझे एक सहारा मिल गया। इक्के वाले ने मुझे घर के पास ही उतार दिया। पैसे देने पर भी उसने पैसे नहीं लिए और कहा बाबूजी मैं तो यहाँ आ ही रहा था। जब मैं घर के अन्दर गयातो आप बैठे हुए थे। मैंने पैर छुए, आप बहुत खुश हुए और कहा नन्हें! सवारी मिल गयी थी तुमको कष्ट तो नहीं हुआ! आप खुद–बखुद फिर बोले फासला काफी है और रास्ता भी ठीक नहीं है, इसलिए लोग दिन निकले ही वहाँ से चलते हैं आइन्दा इसका ध्यान रखना। यह है आपकी सर्वव्यापकता एवं प्रेम जो हर समय गायबाना एवं जाहिरी मदद के लिए तैयार रहते थे।

8. सन् 1959 की घटना है, मेरा मेडिकल मैं चौथावर्ष था और पैथालोजी का सेकेण्ड पेपर था। सुबह नहा धोकर जब मैं पूजा करने बैठा तो क्या देखता हूॅ कि एक बुजर्ग जिनकी सूरत पूजय लालाजी महाराज से मिलती थी वह पूज्य ताऊ जी के साथ मेरे सामने आकर बैठ गये हैं और मुझे पैथोलोजी का पूरा पर्चा दे दिए हैं, मैंने अपने रूम पार्टनर को भी वह सवाल बताये। मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि परीक्षा के पर्चे में सब प्रश्न उसी क्रम में थे जैसा कि उस पर्चें में था। यदि मुझे वह पर्चा न मालूम हुआ होता तो शायद मैं वह पर्ची नहीं कर सकता था क्योंकि सभी प्रश्न बड़े ही बेतुके थे। यह

बुजुर्गों और पूज्य ताऊ जी की दया और प्रेम का एक अनोखा दृष्टांत है कि वह दयालु अपने सेवकों को कैसी सम्भल करते हैं।

9. सन् 1959 में एक दिन हापुड़ में सुबह के वख्त पूज्य बाबूजी मुझे जगदीश बाबू, सुरेश बाबू तथा दो और सत्संगी भाइयों को पूजा करा रहे थे। पूजे में थोड़ी ही देर बैठने के पश्चात् मैंने यह देखा कि पूज्य लालाजी महाराज तशरीफ लाये हैं और पूज्य बाबूजी के बगल में ही एक तरफ बैठ गये हैं। पूज्य लाला जी ने एक सफेद चादर जमीन पर बिछायी और उस चादर पर एक आदमी की लाश रख दी तथा लाश को एक दूसरी सफेद चादर से चारों तरफ से लपेट दिया जैसे कि अर्थी लपेटी जाती है तथा उसके ऊपर खूब फूल छिड़क दिये। उस लाश के सिर पर एक ताज सा था, उसे उठाकर बड़े प्रेम से मेरे सिर पर रख दिया और मुझे खुशी से गले लगा लिया। पुनः पूज्य लालाजी लंगड़ाते हुए Clutehes द्वारा यह कहते हुए वापिस चले गये कि आज से मैं लँगड़ा हो गया। पूजा के बाद मैंने पूज्य बाबूजी को यह सब बतायातो आपने फरमाया कि बिल्कुल यही हालत थी और आज किसी ऐसे प्रेमी की, जो कि पूज्य लालाजी का बहुत ही घनिठ है या तो उसकी मृत्यु हो गयी या हालत खराब है। उन दिनों पूज्य ताऊ जी की तबियत अक्सर खराब चल रही थी। मैंने पूज्य बाबूजी से कहा कि चलिए, हम सब पूज्य ताऊ जी को देख आयें, कहीं ऐसा तो नहीं कि उनकी तबियत खराब हो। मैं पूज्य बाबूजी एवं मेरी माता जी हापुड़ से गाजियाबाद वापस आये हम लोगोंने ने वह हालत पूज्य ताऊ जी से अर्ज की, उसी वक्त फतेहगढ़ से चिट्ठी आई कि पोस्टमास्टर साहब बाबू श्यामबिहारीलाल जी का स्वर्गवास हो गया हदै जो कि पूज्य लालाजी के बहुत ही खास आदमियों में से थे। पूज्य ताऊ जी ने कहा कि बुजुर्गों की हूबहू हालत का उतर जाना ही उनकी प्रेम और निस्बत कहलाती है।

10. 1959 की ही घटना है मैं मेडिकल कालेज में चौथे वर्ष में था, उसी समय पूज्य ताऊ जी ने मुझको चिट्ठी लिखी कि मैं फतेहगढ़ जा रहा हूँ और तुम टूँडले में आकर मुझसे मिल लो। जब मैं टूँडले पहुचा तो आपने बड़े प्रेम से मुझे बिठलाया और पूज्य पंडित जी लालाजी जो भी वहाँ उपस्थित थे उनसे मेरा परिचय कराया। वहाँ मैं श्री दयानन्द जी के परिवार के साथ गया था क्योंकि पूज्य ताऊ जी ने उनको पत्र में यह हिदायत की थी कि आप होस्टल से नन्हें को अपने साथ लेते आइयेगा। दूसरे दिन मैं पूज्य ताऊ जी, सरदार जी साहब एवं श्री दयानन्द जी का पूरा परिवार और बुआ जी (महेश भाई साहब की माँ) सभी लोग श्री दयानन्द जी के गाड़ी से फिरोजाबाद बस

स्टेशन पर गये। बस स्टेशन के आफिस में हम सभी लोग बैठे हुए थे उसी वक्त पूज्य ताऊ जी ने एक गिलास पानी माँगा। पानी लेकर जब मैं पहुँचा तभी दयानन्द जी की बड़ी लड़की (जो कि अब मेरी पत्नी हैं) वह भी पानी ले आईं। पूज्य ताऊ जी ने मेरी सास यानी बाबू दयानन्द की पत्नी से पूछा कि बेटी की क्या उमर होगी और फिर बाहर उठकर चले गये। उन्होंने बाबू दयानन्द जी से एवं श्री सरदार जी साहब से यह कहा कि मुझे अचानक इन दोनों को देखकर ऐसा ख्याल हुआ कि यह जोड़ी बहुत अच्छी रहेगी और इस शादी में मेरी मरजी है। उनके ख्याल का यह फल हुआ कि अंत में मेरा विवाह वहीं हो गया जहाँ वे चाहते थे।

11. उन्हीं दिनों की बात है मेरे पास पैसे बिल्कुल खत्म हो गये थे। घर से पैसे आने में अभी देर थी और पूज्य बाबूजी को पैसों के लिए लिखने की हिम्मत नही पड़ी, वे खुद ही काफी खर्च में थे क्योंकि हम दोनों भाई (मैं और सेठ भाई साहब) मेडिकल कालेज में पढ़ते थे। कई दिनों से एक ही वख्त खाना खा रहा था उस दिन मेरे पास बिल्कुल ही पैसे नहीं थे, न सुबह नाश्ता किया था और न ही दोपहर को खाना खाया था। हाकी का मैच हो रहा था। करीब 5 बजे शाम का समय था एक लड़के ने फील्ड में आकर बताया कि तुम्हारे कोई रिश्तेदार आये हैं। मैंने आकर देखा तो पूज्य ताऊ जी थे। मैंने उनसे चाय पीने को कहा पर उन्होंने प्रेम से मना कर दिया, कुछ देर रुके और बताया कि मैं बाबू दयानन्द जी के मकान में रुकूँगा वहीं जा रहा हूँ। मैं उन्हें छोड़ने गेट तक गया, उन्होंने मुझे दस रूपये काएक नोट निकाल कर दिया और जब मैंने कहा इसकी कोई जरूरत नहीं तो आप हँसने लगे और बड़ी ही मोहब्बत से कहा कि बेटे इसे रख लो, मैं स्टेशन से सीधे तुम्हारे पास इसीलिए आया हूँ, अब मैं बाबू दयानन्द जी के घर जा रहा हूँ और चले गये। दूसरे ही दिन वे सिकन्द्राबाद वापस चले गये। यह था उनका प्रेम जरा–जरा सी तकलीफ का भी ध्यान रखते थे। यह पहला अवसर मेरे विद्यार्थी जीवन का था जब उन्होंने मुझे रूपये इससे पहले उन्होंने कभी भी रूपये नहीं दिए थे।

12. सन् 1959 की घटना है कि पूज्य ताऊ जी ग्वालियर के भण्डारे में जा रहे थे, जाड़े का दिन था। वे आगरे बाबू दयानन्द जी के यहाँ एक रात रुके। दूसरे दिन बाबू दयानन्द जी ने कार का प्रबन्ध किया था जिससे वे आराम से पहुँच जायें। मैं, पूज्य ताऊ जी एवं बाबू दयानन्द जी तथा और सत्संगी भाई टूँडले के भी साथ में थे। जब हम लोग धौलपुर बस स्टेशन पर पहुँचे तो

बाबू दयानन्द जी ने बस स्टेशन में चेकिंग का कार्य किया और किसी एक कर्मचारी को बहुत डांटा जो यह कहे जा रहा था कि मेरी माँ मर गयी थी, इस कारण काम न कर सका। परन्तु उन्होंने डाँटना बन्द नहीं किया (क्योंकि वह आदमी सदा का कामचोर था और झूठे बहाने बनाता रहता था) पूज्य ताऊ जी तो दया के अवतार थे, उनसे रहा न गया और मुझे लेकर बाहर चले गये। मुझसे आपने फरमाया जानते हो मैं क्यों उठ आया। मैंने अर्ज किया आपको उनका डांटना नागवार लगा, आप बोले नहीं अगर मैं और बैठा रहता तो उनको (बाबू दयानन्दजी) नुकसान हो जाता। कितनी दया थी उनमें उस कर्मचारी से कोई सम्बन्ध कोई जान पहचान नहीं, पर वे तो मनुष्य मात्र के प्रति दया रखते थे। उनके ख्यालात का यह असर हुाअ कि जब हम लोग कार में बेठे तो वह बहुत ही प्रयास के बाद भी स्टार्ट न हुई और हम लोगों को बहुत तकलीफ हुई और अंत में बस से जाना पड़ा। उन्होंने कहा ऐसे आराम से कार में जाने से क्या फायदा जिससे दूसरों को कष्ट उठाना पड़े, ऐसे थे वे दया के मूर्ति।

13. 30 जनवरी सन् 1960 की घटना है। मैं मेडिकल कालेज में फाइनल इयर में पढ़ता था और आगरे होस्टल में रहता था।रात को मैंने ख्वाब देखा कि पूज्य ताऊ जी के सिकन्द्राबाद वाले कमरे में पूज्य लालाजी महाराज तशरीफ लाये हैं और कमरे के बीच एक आसन पर बहुत गुस्से में बैठे हुए हैं। उनकी आँखें लाल लाल हैं और सर व दाढ़ी के बाल खड़े हो रहे हैं। चेहरे से काफी नाराजगी जाहिर हो रही है। उनके एक तरफ पूज्य बाबूजी एवं एक तरफ पूज्य ताऊ जी बैठे हुए हैं और वह गुस्से में पूछ रहे हैं कि सत्संग में खराबी आई कैसे? इसकी जिम्मेदारी किस पर है। पूज्य लालाजी महाराज ने सबसे पहले श्री सरदार करतार सिंह धींगरा, दिल्ली वाले को बुलाकर पूछा कि आखिर इस खराबी की जिम्मेदारी किस पर है। श्री सरदार जी ने कुछ हिचकिचाहट के बाद पूज्य ताऊ जी की ओर इशारा कर दिया। पूज्य ताऊ जी ने सरदार जी को बड़े गुस्से की नजर से देखा। इसके बाद पूज्य लालाजी ने यही प्रश्न ताऊ जी के ज्येष्ठ पुत्र (डा0 हरीकृष्ण भटनागर) पूज्य हरी भाई साहब से पूछा तो वे भी कुछ हिचकिचाहट के बाद पूज्य ताऊ जी की ओर इशारा करते हैं, इस पर पूज्य ताऊ जी उन पर भी नाराज होते हैं और गुस्से से देखते हैं। अन्त मेंपूज्य लालाजी महाराज मुझसे भी यही प्रश्न पूदते हैं और मैं भी उनसे यही कह जाता हूँ कि इसकी जिम्मेदारी ताऊ जी पर है। इस पर ताऊ जी मेरी तरफ बड़ी ही गुस्से से देखते हैं और कहते हैं ''तुमसे मुझे ऐसी उम्मीद नहीं थी'' और आलमारी (जो कि उनकी

बगल में ही थी) में से एक किताब उठाकर मेरे दाहिने पैर में बड़ी जोर से मारते हैं जिससे मुझे बड़ा ही दर्द होता है और मैं लंगड़ाने लगता हूँ। यह सपना इतना साफ देखा कि तबियत परेशान हो गयी लेकिन ज्यादा यकीन नहीं हुआ क्योंकि पूज्य जाऊ जी से मैं बहुत ही मुहब्बत करता था। दूसरे दिन यानी 31 तारीख को जब मैं अन्दर पूज कर रहा था तो मुझे बार–बार ऐसा अनुभव हुआ कि कोई बुजुर्ग मेरे सामने बैठे यह कह रहे हैं कि आज तुम हाकी का मैच मत खेलो वरना तुम्हारा पैर टूट जायेगा। 31 जनवरी को मेडिकल कालेज और आगरा कालेज का हाकी मैच था। मैं मेडिकल कालिज टीम का हाकी का कैप्टन था। 10 बजे के करीब मैंने होम सुपरिन्टेन्डेन्ट से कहा कि मेरी तबियत ठीक नहीं जिससे मैं आज न खेल सकूँगा। इस पर उनहोंने तथा मेरी टीम के खिलाड़ियों ने कहा कि आप का वहाँ खड़ा होना बहुत अनिवार्य है केवल आप खड़े रहियेगा। मेरी हिम्मत नहीं पड़ रही थी, ऐसा लग रहा था कि कोई शख्स मुझे भीतर से रोक रहा है। मैं इस बात पर भी तैयार हो गया कि बगैर खेल ही शील्ड आगरा कालेज को दे दी जाये। इसी मो तय करने के लिए मैं और मेरा वाइस कैप्टन तथा गेम सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रिन्सपल के पास गये। उन्होंने मुझसे पूछा तुम्हारी क्या तबियत खराब है, मैंने उनको सब बातें सही–सही बता दी। वे बहुत हँसे और कहा आज मैं भी मैच देखने आऊँगा देखूँ तुमको क्या होता है। वे पूज्य ताऊ जी को अच्छी तरह जानते थे क्योंकि पूज्य ताऊ जी उनके नीचे काम कर चुके थे। मजबूरन मुझे खेलने को तेयार होना पड़ा और चार बजे सायं धूम धड़ाके से मैच शुरू हुआ। आगरा कालेज के सभी खिलाड़ी मेरे परिचित थे और उनका कैप्टन जो मेरा दास्त भी था, मैं उसके साथ कई बार खेल भी चुका था। खेल शुय होते ही पाँच मिनट बाद मैंने आगरा कालेज पर एक गोल कर दिया। खेल मेडिकल कालेज ग्राउन्ड पर ही हो रहा था इसलिए दर्शकों ने मेरी बड़ी सराहना की और मेरा भी खेल में उत्साह बढ़ गया। हाफ टाइम के कुछ ही सेकेण्ड के पहले मुझे फिर गेंद मिली और मैंने गोल मार दिया। जैसे ही मैंने गोल मारा उनके कप्तान ने दाहिने पैर में हाकी मार दी। हाफ टाइम की सीटी हो चुकी थी दर्शकों ने एवं सार्थियों ने मुझे गोदी में उठा लिया तथा मैदानके बाहर ले आये, सभी वाह–वाह करने लगे। कुछ लोग मेरे पैरों को सहलाने लगे। हाफ टाइम के बाद जैसे ही मैं खड़ा हुआ तो लड़खड़ा कर गिरने लगा। तत्काल हड्डी के डाक्टर बुलाये गये और उन्होंने बतलाया कि दाहिने पैर की हड्डी टूट गयी है। खेल होता रहा, मुझे स्ट्रेचर में लाद कर हास्पिटल पहुँचा दिया गया। मेरे पैर का एक्सरे हुआ और प्लास्टर करके मुझे वार्ड में भर्ती कर दिया गया। हड्डी ठीक उसी जगह से टूटी थी जहाँ सपने

में मुझे किताब लगी थी। चार मार्च तक मुझे कुल खास तकलीफ नहीं रही। पाँच मार्च को पूज्य ताऊ जी, सरदार जी, एवं बाबू प्यारेमोहन जी, बाबू दयानन्द जी एवं उनकी पत्नी जो कि पूज्य ताऊ जी को स्टेशन लेने गये थे वहाँ से सीधे मेरे पास अस्पताल में आये। मैंने आपके पैर छुए पर आप प्रसन्न नहीं मालूम देते थे। दो ही मिनट बैठने के बाद आप फौरन बाबू दयानन्द जी के घर चले गये। आपके जाते ही अचानक मेरे पैर में बहुत जोर का दर्द शुरू हुआ तथा मुझे इतना कष्ट हुआ कि मैं दर्द से बुरी तरह तड़पने लगा। मुझे ऐसा लगा कि यह दर्द मेरी जान ले लेगा। मैंने नर्स से डाक्टर को बुलाने के लिए कहा। डाक्टर ने आकर मार्फिया का इन्जेक्शन लगा दिया दर्द फिर भी शान्त न हुआ, तब मैंने डाक्टर से किसी और दवा के लिए कहा इस पर उन्होंने कहा कि तीन षण्टे के बाद ही दूसरा इंजेक्शन लग सकेगा। यह दर्द बराबर घण्टे भर होता रहा और में बेबसी में रो–रो कर पूज्य ताऊ जी को ही याद करने लगा इतने में क्या देखता हूँ कि वार्ड में एक सज्जन छड़ी लेकर चले आ रहे हैं। जब वे पास आये तो मालूम हुआ कि वे लालाजी महाराज हैं। आपने बड़ी ही मोहब्बत से पूछा ''क्या बहुत दर्द हो रहा है?'' इस पर मैंने अपनी हालत व दवा के बारे में बताया तो आपने कहा 'देखें कहाँ दर्द हो रहा है'' और प्लास्टर पर दो बार हाथ फेरा। हाथ का फेरना ही था कि मेरा दर्द बिल्कुल ही चला गया और मुझे पैर में काफी ताकत मालूम पड़ने लगी। पूज्य लालाजी महाराज अपनी छड़ी लेकर वापस चले गये। मुझे ऐसा लगा कि मैं बिल्कुल ठीक हो गया हूँ। मैंनें रात को आठ बजे वार्ड व्वाय की सहायता से प्लास्टर काट दिया और होस्टल वापस चला आया। मुझे सिवाय लंगड़ाहट के कोई तकलीफ न थी और मैं छड़ी के सहारे चलने लगा। सुबह 9–10 बजे पूज्यताऊ जी सरदार जी एवं प्यारे मोहन जी मेरे होस्टल में तशरीफ लाये क्योंकि अस्पताल से मालूम हुआ कि मैं होस्टल चला गया हूँ। आज आप काफी खुश थे और आपके आने से प्रेम ही प्रेम बरस रहा था। आप मेरे लिए काफी फल और लड्डू जो कि सिकन्द्राबाद से लाये थे, लेकर होस्टल आये। थोड़ी देर बाद आपने श्री सरदार जी एवं बाबू प्यारे मोहन जी से कहा कि आप लोग थोड़ी देर बाहर जायें ''मैं नन्हें से कुछ जरूरी बातें करूँगा। मैंने आपको अपना सपना और शुरू से हाल बतलाया।आपने फरमाया कि सब सही है। मैं तुमसे, सरदार जी से औरहरी से वाकई में नाराज था लेकिन मेरी मंशा तुमको नुकसान पहुँचाने की कतई नहीं थी। इधर न चाहते हुए भी कुछबात ऐसी हो जाती है जिसका मुझे भी बाद में बड़ा दुःख होता है। मुझको आज ऐसा अनुभव हो रहा है कि यह मेरी और तुम्हारी आखिरी मुलाकात और बातचीत है। तुम पर सिलसिले के बुजुर्गों

की बड़ी मेहरबानी है। वे मेरे पास करीब एक घण्टे रहे और उस समय बहुत ही अच्छी हालत थी। ऐसा मालूम होता था कि दुनियां की हर चीज बेकार है तथा बगैर ताऊ जी के मैं नहीं रह सकता। आप उसी दिन शाम को इलाहाबाद चले गये। वह हालत बराबर कई दिन तक रही दूसरे दिन सुबह मैंने आपको पत्र लिखा कि मैं परीक्षा छोड़कर आपके पास आ रहा हूॅ क्योंकि मैं आपके बगैर नहीं रह सकता। आपने इलाहाबाद से एक तार मुझे एवं एक बाबू दयानन्द जी को किया तथाशाम को ट्रंकाल पर पहले बाबू प्यारे मोहन और फिर आपसे बात हुई। आपने फरमाया कि तुम्हारा विद्यार्थी जीवन है और तुम्हारा मुख्य कर्तव्य इस समय पढ़ना है यह कश्फी वैराग्य है। उम्मीद है यह हालत जाती रहेगी। तुम इस वख्त मेरे पास न आओ मुझे इस बात में खुशी है कि तुम अच्छे नम्बर से पास होओ। बाबू दयानन्द जी के तार में भी उनको हिदायत की थी कि मेरी देखरेख करें। दूसरे दिन वाकई वह हालत जाती रही। इस घटना को लिख कर मैं केवल यह बतलाना चाहता हूँ कि वे नाराज थे पर क्षण भर को ही।प्रेम में कोई कमी नहीं आई। उनका प्रेम वैसा ही था और वह प्रेम मेरे उनके विछोह काल में भी बना रहा।

सन् 1961–62 में मैं मोदीनगर में पोस्टेड था। पूज्य ताऊ जी प्रिंन्सपल अग्रवाल जी के यहाँ आये थे। अस्पताल में प्रिन्सपल अग्रवाल साहब मेरे पास आये और उन्होंने कहा कि अगर पूज्य ताऊ जी तुमको बुलायें तो तुम आओगे या नहीं? मैंने उनसे उत्तर में कहा जब वह बुलायेंगे तो देखा जायेगा। उन्होंने मुझे यह नहीं बताया कि पूज्य ताऊ जी ने ही उन्हें भेजा था जिसका आज भी मुझे दुःख है। यह भी नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने पूज्य ताऊ जी से जाकर क्या कहा। दोपहर के वख्त करीब 12 बजे जब मैं अस्पताल से वापस आया तो मेरी पत्नी ने मुझे बताया कि पूज्य ताऊ जी मेरे क्वार्टर के सामने फाटक के पास जो गेस्टहाउस था, वहाँ से सीधे सड़क पर चले गए। मुझे उसका विश्वास न हुआ क्योंकि मैंने इसको भ्रम जाना क्योंकि मैंने आपके पास जाना बन्द कर दिया था। सन् 1969 में जब आपने चिट्ठी लिखी तथा जब मैं आपके दर्शन को गया तब आपने मुझे इसे बताया जिसे सुनकर मुझे अत्यन्त दुःख हुआ। ऐसा था आपका प्रेम कि आप हर प्रेमी के लिए तड़पते थे।

15. सन् 1962–63 की बात है, पूज्य ताऊ जी मेरे ससुराल बाबू दयानन्द जी के यहाँ आये हुए थे। मेरी पत्नी वहाँ पर थीं और मेरा लड़का अतुल होने वाला था। बात ही बात में पूज्य ताऊ जी ने अम्मा जी (मेरी सास) से पूछा क्या नन्हें यहाँ आता है, जिस पर कुछ उन्होंने कहा कि उनके चाचा जी

बीमार हैं, इसीलिए इधर नहीं आये। इससे पूज्य ताऊ जी को ऐसा अनुमान हुआ कि उनको कुछ पैसों की तंगी है जैसी बात कही हालाकि अम्मा जी ने ऐसा कुछ नहीं कहा था। इस पर वे कुछ आवेश में आ गये और पिता जी (मेरे ससुर) बाबू दयानन्द जी से बोले! बाबू जी क्या बात करते हैं, उसको पैसे की क्या कमी है! पैसा ही पैसा है। उसी के कुछ ही दिन बाद मेरा ट्रान्सफर बाराबंकी हो गया और मेरे पास उसी दिन से आज तक पैसों की कोई कमी नहीं है। उन प्रेमी के प्रेम की बात क्या लिखूँ अब केवल बया नही कर सकता हूँ। जब कभी याद करता हूँ तो तड़प उठता हूँ, परन्तु मुझे इसी बात का शुक्र है कि जब भी तड़प उठती है, उन्हें अपने रोम–रोम में देखकर शान्त हो जाता हूँ। तड़प भी उनकी, शान्ति भी उनकी।

16. सन् 1964 फरवरी में जब एक बार आप गोरखपुर से लौट रहे थे, सीधे दिल्ली तक ही जाने का प्रोग्राम था। बाबू प्यारे मोहर जी का ट्रंककाल मेरे ससुर बाबू दयानन्द जी के यहाँ आया था कि आप सब भाइयों को सूचित कर दें कि गुरुदेव जा रहे हैं वो लोग स्टेशन पर ही मिल लें क्योंकि आप लखनऊ रुकेंगे नहीं। बाबू दयानन्द उनकी पत्नी तथा ताऊ जी की ज्येष्ठ पुत्री एवं शतीश भाई तथा अन्य सभी लोग चारबाग स्टेशन उनसे मिलने गए। आकस्मात पूज्य ताऊ जी के फोड़े में जो उनके पीछे सीट की जगह पर था, दर्द बढ़ गया जिससे उन्हें रुकना पड़ा और वे रीवरबैंक कालोनी में बाबू दयानन्द जी के यहाँ रुक गये। मेरी पत्नी की तबियत उन दिनों काफी खराब चल रही थी और वह काफी कमजोर थीं। पूज्य ताऊ जी ने प्रेमवश होकर उन्हें देखा और काफी देर तक सब बातें पूछने लगे। वे प्रेम के देवता तो थे ही। उनके प्रेम वर्षा के कारण मेरी पत्नी बहुत रोने लगी क्योंकि उन दिनों मैं तो अपने अहं में भूला था परन्तु वह विछोह से बहुत दुःखी होती थीं। आप प्रेम के आवेश में आ गये और बोले! बेटी दुःख करने की कोई बात नहीं यह तो भावी है। वख्त की बात है मैं मानता हूँ कि वह मुझसे नाराज हैं और मेरी गल्तियाँ बताता है पर क्या बेटे का यही फर्ज है कि बाप गल्ती करे तो बेटा छोड़ दे फिर मैं तो उसका वही ताऊ जी हूँ। जो पहले था। जो गल्तियाँ उसे आज मुझमें दिखती हैं वह पहले भी रही होंगी। यह वख्त है और कुछ नहीं कह सकता। इतना कहते–कहते वह प्रेम में विह्वल हो गए और फिर कहा! बेटी रोने की कोई बात नहीं है। यह जन्म–जन्म का रिश्ता है कोई खत्म कारने वाला नहीं। यह जिस्मानी रिश्ता नहीं है बेटी और वह कहीं जा नहीं सकता, बिका है मेरे हाथ। पर हाँ! मेरी जिन्दगी में आ जाता तो मुझे खुशी होती। खैर! जिन्दगी में न सही मेरी मौत पर तो आयेगा ही। तब

जिन्दगी भर तड़पेगा कि ताऊ जी थे। वे महापुरुष इतना कहने के बाद कुछ क्षण चुप रहे फिर बोले! उसका कोई कसूर नहीं बेटी! मैंने अपनी घरवाली के बाद अगर दुनियाँ में किसी को चाहा है तो इसे ही। इसकी माँ मेरे हवाले कर गई थी, इससे मुझे बड़ी मोहब्बत है। मुझे श्यामलाल के अलग होने और सत्संग अलग करने का कोई दुःख नहीं क्योंकि वह तो होना ही था पर मुझे दुःख इस बात का है कि इन सबने मुझे छोड़ दिया। खैर! बीबी छीन ली गयी फिर मैं इसमें उलझ गया और मन्सूबे बाँधने लगा तो ईश्वर ने मुझे चेताया है कि लो जिस पर तुम नाज करते थे वह तुम्हें छोड़ कर चला गया। इतना कहते–कहते कंठ अवरुद्ध हो गया। मेरी पत्नी जो बहुत रोने लगी थी उसे शान्त कर दिया और कहा! नहीं आता नहीं सही!मैं तो उसे वैसे ही प्यार करता हूँ जैसा पहले करता था। तुम जब भी बुलाओगी आऊँगा। बदकिस्मती मेरी थी कि मैं ऐसा न कर सका हालांकि हृदय से मैं सदैव पड़पता ही रहा। अब उस गुजरे समय को याद करता हूँ तो विश्वास नहीं कर पाता हूँ कि कैसे उनसे दूर रहा और क्यों दूर रहा। अकारण ही! अभाग्यवश! परन्तु मुझे संतोष है कि इतने दोषों के बावजूद भी उन प्रेमपुंज के फैज में कोई कमी नहीं। अपनी दया की अमृतवर्षा से वंचित नहीं किया उन महापुरुष ने। अब भी मैं नतमस्तक होकर यही विनती करता हूँ कि आपका प्रेम बस प्रेम मिले और कोई इच्छा नहीं। ईश्वर उनकी इच्छा पूर्ण करे।

17. सन् 1960 के बाद मैंने पूज्य ताऊ जी के पास जाना बन्द कर दिया था परन्तु उनकी याद हर समय हृदय को बेधती रहती थी। मैं हठी उनसे दूर ही रहा। भण्डारे होते उससे मैं कोसों दूर प्रभावित होता। सब अनुभव करता, यह उनकी क्षमाशीलता एवं दयालुता ही थी, नहीं मुझमें क्या जो उन्होंने इतनी मेहरबानी की। उनसे प्रभावित होता हुआ भी मैं दूर ही रहा परन्तु 1969 के जून में मैं सिकन्द्राबाद उनके दर्शन को गया। इन 8 वर्षों के दौरान मैं पूज्य ताऊ जी का सम्पर्क श्री पूज्य बनर्जी साहब गोरखपुर वालों से हो गया था। कुछ सत्संगी भाइयों ने कहा कि पूज्य गुरुदेव जी ने बनर्जी साहब को गुरु बना लिया है। मेरे दिल में न जाने क्यों यह विचार घर कर गया कि क्या पूज्य ताऊ जी का एतकाद पूज्य लालाजी महाराज से हट गया है। वास्तव में ऐसी कोई बात नहीं थी। मुझे ही भ्रम सा हो गया था और मेरे मन में यह बार–बार आता था। जब 1969 की जून को मैं पूज्य ताऊ जी के दर्शन को गया तो चलने के कुछ पहले आप मुझसे मुखातिब हुए और हाथ की अँगुली से इशारा करके जो कि बनर्जी साहब की तस्वीर की तरफ था बोले! इनको पहचानते हो! यह बनर्जी साहब की तस्वीर है! मैंने इनको

लालाजी महाराज की जगह नहीं दी थी। बेटे! मैं इनसे हिन्दू कल्चर सीखने गया था। मैंने कुछ भी नहीं कहा पर उन अन्र्तयामी ने स्वयं ही मेरे इस भ्रम का निवारण कर दिया था। ऐसे अन्र्तयामी थे वो महापुरुष! जून में मिल कर आया था और हर समय उनको देखने लगा।

18. 28 जुलाई सन् 1969 की बात है। रात को अचानक हालत बदल गयी और बहुत देर तक पूजा करके उसी हालत में सो गया। देखता हूँ कि पूज्य ताऊ जी की हालत बहुत खराब है और सिकन्द्राबाद में पूजा वाले कमरे में बेहोश से चारपाई पर पड़े हैं। मैं हरीभाई साहब एवं श्री सारदार जी साहब तथा अन्य बहुत से सत्संगी भाई गमगीन चारों तरफ खड़े हैं। देखा उसी वख्त आखिरी दरवाजे से लालाजी महाराज एवं उनके पीछे मेरे पूज्य बाबूजी आ रहे हैं। लालाजी कहाराज ने आकर कहा कि ये बीमार नहीं हैं बल्कि तुम सब लोगों ने इन्हें बीमार कर रक्खा है। फिर प्रेम से पूज्य ताऊ जी को गरदन के पास उठाकर बैठा दिया और पूजा होने लगी। मैंने देखा कि पूज्य ताऊ जी पर एक जज्ब तारी था और उनकी तबियत ठीक होने लगी। मेरी आँख खुल गयी। सुबह गुरुपूर्णिमा थी।सन्ध्या में बहुत तबियत लगी और तबियत में कई दिनों तक अजीब आनन्द का अनुभव करता रहा। यह सब उनकी दया थी। जब मैं अगस्त में गया, मैंने उनकी सेवा में यह सब अर्ज किया, आपने कहा कि तुम बिल्कुल सही फर्मा रहे हो और फिर इसी दौरान यह कहा कि तुम्हारा कश्फ बहुत ही अच्छा है। परमात्मा दया करे खूब फलो फूलोगे। पर अब कभी स्थूल का ध्यान मत करो, कभी आये भी तो हटा देना नहीं तो मेरी बीमारिया भी ट्रान्सफर हो जायेंगी और शामेश हो गये।

19. मई 1970 को अपने चचेरे भाई नरेश की शादी में आगरे गया था। 17 मई को सुबह मैं जनवासे से हटकर पूजा के ख्याल से अपने जिज्जी के यहाँ चला गया। मेरे जीजा जी उस समय ताजगंन डिस्पेन्सरी आगरा में ही पोस्टेड थे। पूजा में बैठते ही थोड़ी देर बाद पूज्य ताऊ जी की मौजूदगी मालूम होने लगी और ऐसा लगा कि वह कह रहे हैं कि अब मैंने बिल्कुल चलने की तैयार कर ली है। पूजा के बाद यह ख्याल बड़े जोरों से बार–बार आने लगा कि किसी तरह चल कर पूज्य ताऊ जी के दर्शन किए जायें। जब किसी तरह से यह ख्याल न हटा तो मैंने अपने छोटे भाई बसन्त (डा0 बृजेनद्र कुमार सक्सेना) से कहा कि ऐसा लगता है कि पूज्य ताऊ जी की हालत बहुत खराब है और वे मुझको याद कर रहे हैं। चलो सिकन्द्राबाद यहीं से चलें और उनके दर्शन कर आवें। उसने यह कहकर मुझे सान्त्वना दी कि

मैं हरी भाई साहब, महेश भाई साहब तथा अन्य भाई लोगों से यह कहकर आया हूँ कि अगर पूज्य ताऊ जी की तबियत खराब हो तो मुझे तार व फोन द्वारा सूचित कर दें तथा मैंने जीजा जी के फोन का नम्बर और अन्य सब जगह के पते बता दिए हैं। अगर ऐसी कोई बात होती तो वे लोग मुझे अवश्य सूचना देते। बात खत्म हो गयी। बारात दोपहर को चन्दौसी के लिए वापसी को रवाना हुई। मगर मेरी तबियत बिल्कुल न लग रही थी। मन उचाट सा हो रहा था और दिल घबरा रहा था। जब बारात बदायूँ पहुँची तो सबके कहने के बावजूद भी मैं बदायूँ उतर गया। मेरे साथ पूज्य बाबू जी भी (डा0 श्यामलाल सक्सेना) उतर गये। मेरी यह हालत 18 की सुबह तक रही। 18 की सुबह को पूजा में मैने फिर उनकी मौजूदी देखी और आपको यह कहते हुए पाया कि अब मैं बिल्कुल आजाद हो गया हूँ। शाम को पाँच बजे के करीब मेरे छोटे भाई नन्हूँ का तार मिला जिससे यह हृदय विदारक सूचना मिली कि पूज्य ताऊ जी का विसाल (18 मई 1970) आज सुबह हाेि गया है और मिलते ही मुझको ऐसा लगा कि मेरा सब कुछ लुट गया और दुनिया में मेरा कोई न रहा। मेरा दिल बार–बार अपने को कोसता रहा कि क्यों न मैं आगरे से सीधे सिकन्द्राबाद दर्शन हेतु चला गया! मैं पूज्य बाबूजी से कहा कि मैं पूज्य ताऊ जी के अन्तिम दर्शन हेतु अभी रात की गाड़ी से जा रहा हूँ। मैं और बाबूजी 18 की रात को ही बदायूँ से सिकन्द्राबाद को रवाना हुए। वहाँ से हाथरस तक आराम से पहुँच गये। दिल में यही आता था जिस तरह हो सिकन्द्राबाद पहुँच कर आपके दर्शन करूँ। हाथरस में तीन गाड़ियाँ उस तरफ की छूट गयीं। तमाम कोशिशों के बावजूद उनमें न चढ़ सके। मैं चारों तरफ ट्रक और टैक्सी की तलाश में दौड़ता रहा मगर कामयाबी न मिली। मेरी परेशानी और भाग दौड़ देखकर पूज्य बाबूजी ने कहा कि बेटे! परेशान होने से कोई काम नहीं बनेगा। ईश्वर पर भरोसा रक्खो। अगर ईश्वर ने चाहा तो हम लोग वक्त से पहुँच जायेंगे। सुबह 6 बजे हम लोगों को लखनऊ एक्सप्रेस गाड़ी मिली जिसमें बड़ी कोशिश के बाद फर्स्टक्लास में हम लोग चढ़ पाये। टिकट गाजियाबाद का लिया था पर जल्दी के कारण खुर्जा उतर गये जिससे सीधे सिकन्द्राबाद पहुँच जायें। खुरजा जं0 में बस खड़ी थी और यह जानकर कि यह सीधे सिकनद्राबाद जायेगी बड़ी खुशी हुई। हम लोग उसमें बैठ गये।बस खुरजा सिटी बस स्टाप परआई तो यह ज्ञात हुआ कि यह नौ बजे जायेगी, उससे पहले एक बस की बुकिंग हो रही थी जो भर चुकी थी। कन्डक्टर एवं ड्राइवर से बहुत प्रार्थना करने के बाद भी उसमें जगह नहीं मिल पायी। परेशानी बराबर बढ़ रही थी दिल बेचैन हो रहा था और विघ्न पर विघ्न पड़ते जा रहे थे। जब नौ बजे हम लोगों की बस स्टार्ट

होकर चली तो कुछ झगड़ा हो गया जिसके कारण बस फिर रुक गयी तब ड्राइवर से मैंने अपनी परिस्थितियाँ बतायीं उसने बड़ी ही सहानुभूति दिखलाई और बस को अत्यधिक तेज चलाकर लाया, 10 बजे सिकन्द्राबाद पहुँचा दिया। हम लोग रिक्शे से घर की तरफ रवाना हुए, दिल में बड़ी बेचैनी थी कि आखिरी वख्त दर्शन होंगे या नहीं क्योंकि तार में सुबह 7 बजे के लिए लिखा था ज्यों ही हम लोग घर के पास पहुँचे, आपकी अन्तिम यात्रा शुरू हुई थी। थोड़ी देर तो आपको मृत्यु शैया पर लेटे देख कर बहुत ही दुःख हुआ तथा जो गम मेरे दिल पर बीता वह मैं ही जानता हूँ, जिसे मैं बयान नहीं कर सकता हूँ। मेरे आँसू झर–झर गिरने लगे और आँखे टकटकी बाँधे कुछ क्षण आपको देखती रही। जब मैंने आपको कंधा दिया तो साक्षात ऐसा मालूम हुआ कि आप उठकर बैठ गये हैं और मुझसे कह रहे हैं ''बेटे इसमें रोने और परेशान होने की क्याबात है, अब मैं जिस्म के कैद से आजाद हूँ और हर वख्त तुम लोगों की मदद में हूँ। आपके उन अलफाजों में कुछ ऐसी जान थी कि दिल से गम एकदम जाता रहा तथा दाह संस्कार की क्रियाओं को देखते हुए भी और आँसू न गिरे। अन्त समय में अपने दर्शनदेकर अपनी ही भविष्यवाणी जो आपने 1964 में की थी, उसको सत्यार्थ कर दिया जो कि उन्हीं के शब्दों में लिख रहा हूँ। ''अगर नन्हें मेरी जिन्दगी में आ जाय तो मुझे बड़ी खुशी होगी वरना चाहे कुछ हो वह मेरी मौत पर अवश्य आयेगा।''

20 .आपका विसाल मई में हो चुका था और आपने जो विश्वास दिलाया था कि मैं हरवख्त तुम्हारी मदद करूँगा उसको सत्य कर दिया है। हर क्षण हर परेशानी हर दुनियावी उलझन में उलझते ही आप कृपा के सिन्धु सदैव प्रत्येक विघ्नों को आप काटते हैं। हर मुश्किल को उन मुश्किल कुशां ने ही आसान कर दिया है। हे दयापुंज! ऐसी ही दया दृष्टि इस सेवक पर रखना। तुम्हारी प्रेमदृष्टि में कमी न हुई। हालांकि मुझमें इतनी योग्यता कहाँ थी पर, हे दयालु! तुमने मुझे कभी असहाय नहीं किया है।

21. 4 अगस्त, 197 की घटना है कि सेन्ट्रल गवर्नमेंट के कुछ उच्च अधिकारी गोंडा जिले के इस पी0एच0सी0 के निरीक्षण करने को आये थे, मैंने यहाँ 18 जुलाई को ही चार्ज लिया था और फिर एक हफ्ते की छुट्टी लेकर पब्लिक सर्विस कमीशन के इन्टरव्यू के सिलसिले में इलाहाबाद चला गया था। एक अगस्त को वापस आने पर पता चला तो मैं उन सबकी तैयारी और काम में बहुत लग गया। बराबर तीन दिन रात दिन काम करता रहा। चार तारीख की रात को करीब 11 बजे अस्पताल में काम कर रहा था और सभी

अन्य कर्मचारी खाना खाने के लिए कुछ ही देर पहले जा चुके थे। मैंने देखा कि आप आकर सामने वाली कुर्सी पर बैठ गए हैं और कह रहे हैं कि 'बेटे परेशान नहो। ओआयना बहुत ही अच्छा होगा। मैं यह नहीं देख सकता कि तुम सुबह से भूखे प्यासे काम करते रहो। जाओ खाना खाओ। जब मैं घर आया तो मेरी धर्मपत्नी ने भी मुझसे यह बताया कि अभी–अभी मेरी आँख लजग गयी थी और मैंने सपने में देखा कि पूज्य ताऊ जी खड़े हैं और कह रहे हैं कि नन्हें को बुलाकर खाना खिला दो। मैंने खाना खाया पर मुझसे खाया नहीं जा रहा था। बार–बार आपकी दया वत्सल्ता और प्रेम याद करके शरीर रोमांचित हो जाताथा।सुबह मुआयना हुआ और सभी लोगों ने बड़ी ही प्रशंसा की। मेरी P.Hc. को गोंडा की सबसे अच्छी P.Hc. बतलाया गया। मेरे काम की बड़ी सराहना की गयी, वह सब उनकी ही कृपा की देन है जो हम सबको सरोबोर कर रही है।

21. 2 अगस्त, 1970 की बात है, रात को यह ख्वाब देखा कि शर्मा बहिन सिकन्द्राबाद के आँगन में अपना सामान लेकर बैठी हैं और खूब रो रही हैं। पूज्य ताऊ जी आते हैं, उनको रोता देखकर दुःखी होते हैं और मेरी तरफ इशारा करके कहते हैं कि तुम्हारा सब इन्तजाम हो जायेगा। मेरी आँख खुल गयी। इस स्वप्न को मैं कुछ समझ न सका और कुछ ध्यान न दिया क्योंकि शर्मा बहिन से मैं परिचित नहीं था। उसी दौरान मैं 8 सितम्बर 1970 को स्वप्न देखा कि मैं फैजाबाद बस स्टेशन पर जाता हूँ, वहाँ पर पूज्य ताऊ जी शर्मा बहिन तथा अपने छोटे भाई बसन्त को देखा। पूज्य ताऊ जी एक कुर्सी पर बैठे हैं , वहीं जाकर मैं उनके पैर छूता हूँ और पूछता हूँ कि आप यहाँ कैसे? आपने कहा कि मैं शर्मा को तुम्हारे यहाँ पहुँचाने जा रहा था। आप खुश थे और भी बातें होती हैं, जो मुझे याद नहीं और आँख खुल जाती है। मैं शर्मा बहिन के बहुत अधिक सम्पर्क में न था, इससे मुझे यह भी न मालूम था कि वह कहाँ हैं। मैंने एक पोस्टकार्ड उनको डाल दिया कि आप जब चाहें यहाँ आ जायें और कोई परेशानी हो तो लिखें। खत लिखने के बाद मुझे अपने इस ख्यालात से छुट्टी मिली। मेरी चिट्ठी सिकन्द्राबाद से रि–डायरेक्ट होकर कासंगज गई क्योंकि शर्मा बहिन कासगंज चली गयी थी।उनका पत्र आया तो मैंने रू0 25/–मनीआर्डर कर दिया। आप 31 अक्टूबर को मेरे पास आ गयीं और 20 नवम्बर को वापस चली गयीं। अजीब सी बात थी। मेरी उनसे कुछ भी जान पहचान न थी। हाँ 1969 के अगस्त में जब मैं पूज्य ताऊ जी के पास गयाथा तब उन्होंने मुझसे यह जरूर कहा था '6बेटे इसने मेरी बड़ी सेवा की है, इसका ध्यान रखना, इसे अगर कष्ट हुआ तो मुझे बड़ा

दुःख होगा।'' उस समय इन शब्दों का अधिक अर्थ न समझ सका था पर बाद में वे शब्द मुझे हर समय उस कर्तव्य की याद दिलाने लगे जो उन्होंने मुझसे कहा था।

22. बुरी सोहबत में पड़ने के कारण मैंने बहुत छोटी उम्र से सिगरेट पीना शुरू कर दिया था। यह जानते और समझते हुए कि यह बुरी लत हैं, मैं छोड़ नहीं पाता था और छिप–छिप कर पीता ही रहा।सन् 1959 में एक बार जब आप आगरे में मेरे होस्टल में अचानक तशरीफ लाये तब आपने मुझसे पूछा था कि क्या तुम सिगरेट पीते हो? मैंने कहा जी हाँ। आपने वही साधारण रीति से फरमाया कोई बात नहीं छूट जायेगी। परन्तु मैं बराबर पीता ही रहा और अपेक्षा पहले के कुछ ज्यादा ही हो गया। 4 फरवरी 1971 की रात को मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि पूज्य ताऊ जी तथा एक और बुजुर्ग मेरे पास बैठे हुए बराबर कह रहे हैं कि अब सिगरेट पीना छोड़ दो तथा यही हालत रात भर रही। 5 फरवरी 1971 को मैंने पूज्य ताऊ जी एवं उन बुजुर्ग की दया से सिगरेट पीना हमेशा–हमेशा के लिए छोड़ दिया। मुझे कोई तकलीफ नहीं हुई बल्कि ऐसा अनुभव हुआ कि मैंने सिगरेट कभी पिया ही न हो। इस प्रकार वह बुरी आदत इतनी आसानी से छुड़वाने की दया आपने कर दी और इतने सालों की बुरी लत बिना किसी परेशानी के छूट गयी।

23. आप सर्वव्यापक रूप से हर तरह से अपनी दया बनाये रहते हैं। मैं किसी तरह उनका गुणगान करूँ। 1971 की बात है, मुझे इनकम टैक्स के असिस्मेंट के सिलसिले में अपनी कृषि एवं जमीन आदि का व्यौरादेना था जिसके लिए मैं अपने गाँव कटिया गया हुआ था। बी0डी0ओ0 से प्रमाणित करना कि मेरी कितनी जमीन कटिया में है और पैदावार लगभग कितनी है। जब मैं और मेरे चचेरे भाई साहब श्री मदनलाल जी उनके ब्लाक में गये तो मालूम हुआ कि वे अभी बस से जा चुके हैं। हम लोग एक चाय की दुकान पर बैठ गये। चाय की दुकान वाले ने बताया कि बी0डी0ओ0 साहब तथा कुछ अन्य लोग बस में यही से गये हैं। हम लोग बस की प्रतीक्षा में वहीं बैठ गये। आपकी मौजूदगी शुरू से ही थी। मुझे ऐसा लगा कि आपने कहा है कि सामने सड़क की ओर से बी0डी0ओ0 साहब आ रहे हैं।मैं तथा मेरे भाई उस ओर गये और आश्चर्य की सीमा न रही देखा कि बी.डी.ओ. साहब मौजूद थे उन्होंने वहीं पर मेरे कागजात पर हस्ताक्षर कर दिए और कहा कि मोहर नहीं है। उनके साथ शायद उनके दफ्तर का कोई क्लर्क भी था उसने कहा कि मेरे पास मोहर भी है। इस प्रकार मेरा काम हो गया। दरअसल बी0डी0ओ0

साहब पहली बस में सवार हो चुके थे परन्तु वो कोई बहुत जरूरी कागजात भूल गये थे जिससे उनको और उनके क्लर्क को उतरना पड़ा था। यह सब उनकी दया थी। उसके बाद जब तक ट्रेन में मैं सफर करता रहा, उनकी मौजूदगी बड़ी ही साक्षात थी। मैं जब कटिया जा रहा था, तब काफी परेशान था और लौटते समय मेरी सब परेशानियाँ दूर हो चुकी थी। सबसे बड़ा आश्चर्य तब हुआ जो इस्पेक्टर असिस्मेंट हो गया। जिस कागज को लेने गया था उसकी भी जरूरत नहीं पड़ी थी।

इस प्रकार परम् पूज्य ताऊ जी ने एक बार फिर अपने सेवक को अपने दया से ओत–प्रोत कर दिया था। मेरी हर कठिनाई को वह स्वयं किसी न किसी तरह से दूर कर देते हैं और मेरा मार्ग प्रशस्त कर देते हैं चाहे वह दुनियावी हो या दीन की हो। हे परमपूज्य! अपनी दया और प्रेम सदैव बनाये रखना। तुम्ही वह सम्बल हो जिसके बल पर मैं अपने को बलशाली समझता हूँ। कभी कभी तुम्हारी इतनी दया और प्रेम का हाथ देखकर खुद अपने ऊपर नाज हो जाता है।

24. 8 मार्च 1974 की बात है, मैं अपने ससुराल लखनऊ बाबू दयानन्द जी के यहाँ होली के शुभ अवसर पर गया था। परिवार के सभी लोग वहाँ पर मौजूद थे। मेरे बड़े साले ने हजरतगंज में काफी पीने का प्रोग्राम बनाया।मैं तथा परिवार के सब लोग कार से हजरतगंज पहुँचे। कार के रोते ही मेरी हालत बदल गयी और मुझे एक क्षण को ऐसा लगा जैसे पूज्य ताऊ जी आगे जा रहे हैं। पुनः यह अनुभव हुआ कि मेरी ही आत्मा कह रही है कि शतीश भाई के यहाँ चले जाओ।मैंने जाने का निश्चय किया और सभी लोगों से कहा कि आप लोग यहाँ रुकें मैं अभी पाँच मिनट में शतीश भाई के यहाँ से होकर आता हूँ।मैं, मेरे ससुर साहब तथा मेरा छोटा साला अजय शतीश भाई के यहाँ गये वहाँ उन्होंने यह बतलाया कि शर्मा बहिन को कासंगंज में फालिज मार गया है। तार आया है। मैं लौट आया। काफी पीने में मेरी तबियत बिल्कुल न लग रही थी परन्तु सबके आग्रह से मैं बैठा रहा। आज तक समझ में नहीं आया कि न जाने क्यों मुझे यह ख्याल परेशान करता रहा कि कासगंज चले जाओ और शर्मा बहिन को ले आओ। अन्ततोगत्वा ख्याल ने इतना जोर मारा और लगा कि अगर मैं लेने नहीं जाऊँगा तो पागल हो जाऊँगा। मैंने अपनी पत्नी और सास से कहा कि मैं कासगंज जाऊँगा और मैं चला गया। काशगंज पहुँचने पर पता चला कि हालत ठीक नहीं है, परन्तु मेरा निश्चय वह ही रहा।हालत बराबर वही रही, अर्न्तात्मा कह रही थी ले चल! ले चल! वहाँ से मैं शर्मा बहिन को ले आया। लखनऊ तक मुझे ऐसा

लग रहा था कि कहीं कुछ हो न जाये पर यहाँ ले आया और धीरे–धीरे वह ठीक होने लगी। मुझे शर्मा बहिन से कुछ अधिक परिचित होने का प्रश्न ही नहीं था परन्तु उन महापुरुष ने यह सब मुझसे करवाया। मैं उनका एक यन्त्र हूँ। जिधर वे महापुरुष घुमाना चाहते हें, घुमा देते हैं। यदि मैं शतीश भाई साहब के यहाँ नहीं गया होता तो मुझे शर्मा बहिन के बीमारी का पता भी नहीं चलपाता और मैं सुबह नवाबगंज वापस चला आया हाहेता परन्तु आप जो काम लेना चाहते हें, वह स्वयं करा हीलेते हैं। यह आपका सभी को सहयोग पहुँचाने का निराला ढंग है। शर्मा बहिन कहती हैं कि ''ओरई में एक बार पूज्य ताऊ जी ने मुझसे कहा कि अब मैं बहुत जल्दी जाने की तैयारी में हूँ। तब मैंने दीन होकर घबराकर और रोकर पूछा मेरा क्या होगा, मैं आपसे पहले मरना चाहती हूँ। इस पर वे बोले कि तू परेशान मत हो, मैं तेरा सब इन्तजाम कर दूँगा।'' और उस सत्यवादी ने और उस भविष्यवक्ता ने उस परम दयालु ने प्रत्येक पर इतनी कृपा की है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। जिसकी कोई इन्तहा नहीं। हे परमप्रिय मेरी आँखें तुम्हारी ओर सदैव खुली हैं, तुम्ही उसका संचालन करो। मेरे हाथ बँधे हैं क्योंकि ये कमजोर हैं। हे बलशाली मेरे निकट आओ चाहो तो इसे बदल दो। मेरा यह मुख तुम्हारे ही गुण गाने के लिए लालायित है परन्तु तुम्ही शब्द दो तुम्ही स्वर दो, तुम्ही प्रेरणा दो। हे गुरूदेव तुम सबका कल्याण करो। हे गुरुदेव तुम्ही सबका कल्याण करो।

आध्यात्मिक उत्तराधिकारी

हमारे सिलसिले की यासंतमत की यह परम्परा है कि जब कोई संत या बुजुर्ग दयाल देश जाने की तैयारी करते हैं तभी अपने प्रेमियों में से कुछ को अपना उत्तराधिकारी बनाकर परमात्मा के नाम का संचार करने एवं जन कल्याण हेतु छोड़ जाते हैं। जो उनके विसाल के बाद उनके कार्य को भलीभाँति चलाते हैं। यह एक परम्परा है। ऐसे प्रेमी केवल एक या दो ही हाेते हैं और वंश के महापुरुष उनको कबूल करके उन्हें सदा अपने फैज से फैजयाब करते हैं। यही सिलसिले की बरकत है। परम पूज्य ताऊ जी महाराज जी ने भी अपने जीवनकाल में अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया था। सत्संग परिवार में तीन प्रेमियों को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है। जो निम्नलिखित हैः–

(1) श्री सरदार करतार सिंह धींगरा (दिल्ली निवासी)
(2) श्री डा0 हरीकृष्ण भटनागर (सिकन्द्राबाद)
(3) श्री डा0 बृजेन्द्र कुमार सक्सेना (रुड़की)

सर्व श्री सरदारकरतार सिंह धींगरा दिल्ली निवासी आपके उत्तराधिकारियों में सबसे बुजुर्ग और बाउमर हैं। आपने परम पूज्य ताऊ जी तथा सत्संग परिवार के बहुत से भाई बहनों की जिसकी भी आर्थिक कठिनाइयॉ पड़ी और जिसको भी परम पूज्य ताऊ जी ने चाहा उनकी बड़ी ही आर्थिक सेवा की है। आपने सदैव त्याग किया है जो कि सराहनीय है। प्रारम्भ से ही पूज्य ताऊ जी की दृष्टि आपकी ओर थी और आप अब भी राम नाम का कार्यर्द बड़ी लगन एवं निष्ठा से कर रहे हैं।

श्री डा0 हरीकृष्ण भटनागर जी पूज्य ताऊ जी के ज्येष्ठ पुत्र हैं। आप उनको बड़े ही प्रिय थे। बचपन से ही मैं जानता हूँ कि पूज्य ताऊ जी अपने बच्चों में हरी भाई साहब (हरीकृष्ण भटनागर) को बहुत चाहते थे।आपको पूज्य ताऊ जी ने सन् 1946 में बैत किया था और बड़े ही प्रेम से सिखाया था। मैंने कई बार उनके श्री मुख से स्वयं हरी भाई साहब से यह पूछते पाया कि हरी! मैं तमाम रात मुम्हें गायबाना तालीम देता हूँ, तुम्हें कुछ पता चलता है या नहीं।इस प्रकार पूज्य ताऊ जी ने आपको आध्यात्म विद्या से मालोमाल करके अपना आध्यात्मिक उत्तराधिकारी चुन लिया।

डा0 बृजेन्द्र कुमार सक्सेना जो कि उम्र में इन सबसे कम है।पूज्य ताऊ जी को बहुत ही प्रिय थे और आप भी पूज्यताऊ जी से बहुत प्रेम करते थे। आरम्भ से ही पूज्य ताऊ जी ने आपको चुन लिया था जिसके सम्बन्ध में एक घटना देकर इसे सपष्ट कर दूँ। सन् 1954 के भण्डारे की बात है, बृजेन्द्र कुमार (सुपुत्र डा0 श्याम लाल जी) को सत्सेंग में आये हुए बहुत ही कम दिन हुए थे, उसी भण्डारे में पूज्य ताऊ जी ने यह घोषणा कर दी कि श्यामलाल के तीनों लड़कों को मेरी तरफ से सब इजाजत है। सत्संग परिवार के कुछ लोगों को यह बात अच्छी नहीं लगी क्योंकि बसन्त तब बहुत ही छोटी उम्र का था और कुछ ही वर्ष पहले से पूजा प्रारम्भ की थी। सत्संग के इस तनावपूर्ण वातावरण को हटाने हेतु मेरे पूज्य बाबूजी डा0 श्यामलाल जी ने पूज्य ताऊ जी से कहा कि इस घोषणा को रद्द कर दें। जिस पर पूज्य ताऊ जी ने आवेश में आकर कहा कि यह कोई मेरी चीज नहीं है और फिर बसंत (डा0 बृजेन्द्र कुमार) से तो मेरा सिलसिला विदेशों में भी फैलेगा। इस प्रकार उनकी तबकी की हुई भविष्यवाणी ने अपनी सत्यता को प्राप्त किया। 5 मार्च 1975 को डा0 श्यामलाल जी ने भी उनको इजाजत दी और पूज्य ताऊ जी के द्वारा दी हुई इजाजत को तस्दीक किया। ईश्वर एवं बुजुर्गों से विनती एवं प्रार्थना है कि उनका सौंपा हुआ काम उन्हीं की अनुकम्पा एवं दया से वह पूरा करें। गुरुदेव अपने प्रेम एवं दया से उनको मालामाल करें और ईश्वर का

नाम जन–जन तक पहुँचावे तथा अपने पूज्य आराध्य का नाम इस संसार में रोशन करें।

अन्तिम प्रार्थनाः–

जो देखा था वह ख्वाब था।
जो सुना था वह अफसाना।।

हे परम्पूज्य! दयापुन्ज! गुरुदेव! 18 मई 1970 को जब आपने पार्थिव शरीर का त्याग कर परमधाम में विश्राम लिया तो ऐसा लगा जैसे हम सब अनाथ हो गए, बेसहारा हो गए। परन्तु ऐसा न हुआ! उस दयालु ने हमें बेसहारा न छोड़ा, वरन् समय–समय पर अपने गायबाना मदद के द्वारा हमें कभी सचेत किया तो कभी प्यार किया, कभी प्रोत्साहित किया तो कभी पथ प्रदर्शन किया, आगे बढ़ा दिया, कभी दुःख काटे, गरज यह है कि हर समय हर मोड़ पर हर कार्य पर वैसे ही दृष्टि रखते हैं जैसे रखा करते थे। यह मेरी अनुभूति है और यह मैं आशा करता हूँ। सभी प्रेमीजनों को अनुभव होगा कि वह अपने जनों पर कितनी दया करते हैं।

अन्त में मैं आपसे ही विनय करता हूँ कि हे प्रभू! मैं तेरा नाम जपूँ और दिल में तेरी याद बनी रहे, इस माया से भरे संसार में मैं कोई ऐसा काम न करूँ जिससे तुम रूठ जाओ या सिलसिले के बुजुर्गों को मन्जूर न हो। संसार अनित्य है, इसलिए संसार की सभी चीजें नाशवान हैं, जानता हूँ फिर भी उसमें मशगूल हो जाता हूँ। हे दयापुन्ज हर नादान को अपना समझ कर, गुनाहों से भरा समझकर, भी अपने प्रेम से परिपूर्ण रखो। यही मेरी इच्छा है।

हे प्रभू! या तो मेरे दिल को वश में ला दो और चरणों में ऐसा लगा दो जैसा तुम चाहते हो या फिर मेरी इस बेदिली की इबादत को ही मन्जूर करो। तुम्हारी इच्छा ही सर्वोपरि हो।

परम पूज्य ताऊ जी के दो अन्तिम पत्र जो मोहब्बत के प्रतीक स्वरूप हैं, जिन्हें पढ़–पढ़कर उनके प्रेम से रोम–रोम ओत–प्रोत हो जाता है।

⌘ ❁ ⌘

ॐ

सिकन्द्राबाद
21.05.1969

अजीजमन दुआ!

आपका खत अभी मुझको मिला। पढ़ कर खुशी हुई और अफसोस इस बात का है कि जरा सी misunderstanding में इतना वख्त दूर रहे। जब तुम मोदीनगर में थे तब कई दफै तबियत चाही कि मिल आऊँ लेकिन न पहुँच पाया। जब मैं गोरखपुर जाता था तब भी तबियत मिलने को चाहती थी लेकिन बदकिस्मती हिम्मत न कर सका। मैं तुमको यकीन दिलाता हूँ कि मुझको तुमसे वही मोहब्बत है जो पहले कभी थी और तुमको देखने को तबियत चाहती है। मेरा अब आखिरी वख्त है, अब काबिल नहीं रहा कि कहीं जा सकू अगर तुम दर्शन दो तो इनायत होगी। अगर तुम ले जा सकते हो तो मैं तुम्हारे साथ जाने को तैयार हूँ। अगर इस वख्त रुखसत मिल सके तो बहुत अच्छा है। वरना जब जल्दी से जल्दी दर्शन दे सको मैं Diabeties और Blood Pressure का मरीज हूँ, बिस्तर पर पड़ा रहता हूँ। परमात्मा तुमको खुश रखे। बेटी को आशीष, बच्चों को दुआ।

तुम्हारा खैरअनदेस
श्रीकृष्ण

ॐ

सिकन्द्राबाद
02.08.1969

अजीजमन दुआ!

तुम्हारा खत मिला। इससे पहले तुम्हारे 2 खत मुझे किसी ने नहीं दिए। तुम जानते हो मैं बिस्तर पर पड़ा हूँ। ब्लड यूरिया दिखलाया था 65 निकला। इसके लिए 2 इन्जेक्शन लग चुके हैं। बाद में न्यूमोनिया हो गया और फिर सीधी टंग में सूजन आ गया। जब भी किसी चीज की जरूरत होगी तुमको लिखूँगा। बसन्ता एक रोज के लिए आया था। बहू को आशीष! बच्चों को प्यार! परमात्मा तुमको खुश रक्खे।

शुभ चिन्तक
श्रीकृष्ण

सोये पड़े हो चैन से, ओढ़े कफन मजार में।
सिजदा किया मैंने आन जो, धीरे से मुस्कुरा दिए।
बिजली तड़प के गिर पड़ी, मेरा सकूँ जला दिए।
हमारा तुम्हारा फैसला होगा खुदा के सामने।
तुम जब आये सामने मेरे, मेरा ही सर झुका दिये।।

तुम तो जिस खाक को चाहे वह बने बन्दा पाक
मैं खुदा किसको बनाऊँ जो खफा तू हो जाये।

पहुँचा कोई काबे से कोई देर से पहुँचा।
थी जिस पे तेरी मेहर वही खैर से पहुँचा।।

न बुत खाने को जाते हैं न काबे में भटकते हैं।
जहा तुम पाँव रखते हो वहाँ हम सर पटकते हैं।

जब नाम तेरा लीजिए तब अश्क भर आए।
यूँ जिन्दगी करने को कहाँ से जिगर आए।।

बहुत ही डरते डरते वह अजहार करता हूँ।
मैं तुमको चाहता हूँ पूजता हूँ, प्यार करता हूँ।।